चन्दामामा
जुलाई १९७७

स्कूल के लिए बेजोड़

MATH
बाटा के सभी प्रकार के स्कूली जूते मजबूत और आरामदेह होवे हैं। वे खास तौर पर इस तरह बनाये गये हैं कि छोटे पैर इन में सही शकल सूरत में बढ़ सकें।
वेफाइंडर्स १७
साईज ९-११, १२-१, २-५
रु २४.९५, २८.९५
३२.९५
कॉमेट ७३
साईज ९-११.१/२, १२-१.१/२, २-५
रु २३.९५, २६.९५
३०.९५
Bata
बढ़ते पैरों को स्वस्थ और सुन्दर रखता है।

अब बच्चा नहीं रहा, काफी बड़ा हो गया हूँ!
तो फिर स्नानगृह के भीतर पढ़ने में रुकावट क्यों?

पेश है अन्तराष्ट्रीय स्तरके सैनिटरीवेयर और वॉल टाइल्स

VITREOUS ® **हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज लिमिटेड**

सबसे ज्यादा बिकने वाले और सबसे ज्यादा निर्यात किये जाने वाले भारतीय स्नानगृह उपकरणों के निर्माता

® **सोमानी-पिल्किंगटन्स् लिमिटेड**

हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर की एक सहायक संस्था तथा सबसे ज्यादा निर्यात किये जाने वाले भारतीय वॉल टाइल्स के निर्माता

२, रेड क्रॉस प्लेस, कलकत्ता-७०००१.

naa. HSI-7720 HIN

विद्यार्थियों के लिए
सर्वोत्तम पेन
ब्लॅकबर्ड द्वारा निर्मित

अब, ब्लॅकबर्ड विद्यार्थियों के लिए खास पेन, 'स्कॉलर' तैयार करता है। यह हलकी, आकर्षक और सुडौल है जिससे यह आसानी से पकड़ी जा सकती है—और स्याही के लगातार सहज बहाव के लिए इस में बारीक इरिडियम टिप्ड निब लगी हुई है। इसे एक बार देखिए। आजमाइए। आप कह उठेंगे 'वाह! वाह! पेन हो तो ऐसी हो'!
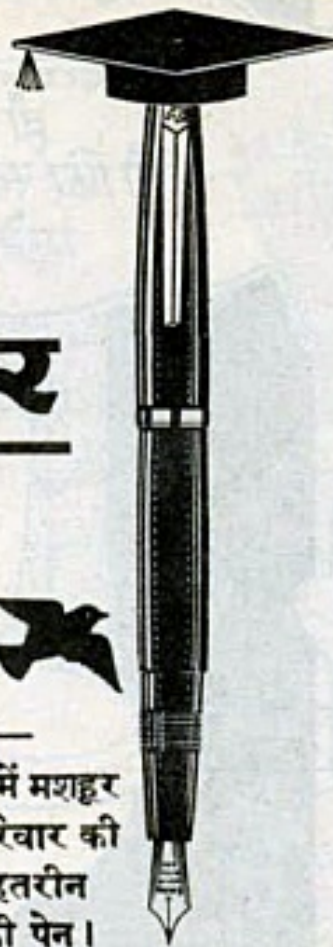
स्कॉलर पेन—
दुनिया भर में मशहूर ब्लॅकबर्ड परिवार की एक और बेहतरीन क्वालिटी की पेन।

heros' SI-132 C HIN

चन्दामामा

जुलाई १९७७

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI. CHANDAMAMA is published monthly and distributed in U.S.A. by Chandamama Distributors, West Chester PA 19380. Subscription 1 year $ 6-50. Second Class Postage paid at West Chester, PA.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "एक समय का स्वर्ग" है। इस कहानी के द्वारा हमें यह विदित होता है कि अयोग्य व मूर्ख व्यक्ति क़िस्मत के बल पर अगर संपन्न हो जाता है तो वह कैसे उसे अपने हाथों से खो बैठता है।

"सबसे खराब धंधा" नामक कहानी में सोमगुप्त को चोरी का धंधा मिनटों में लखपति बन जाने का प्रतीत होता है, लेकिन उस धंधे में प्रवेश करने के बाद उसे वास्तविक स्थिति का परिचय मिलता है कि चोरी करने का धंधा कैसे प्राणों को खतरे में डालनेवाला सबसे खराब धंधा है।

वर्ष : २९ जुलाई १९७७ अंक : ११

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

CHANDAMAMA PUBLICATION

अमर वाणी

धर्मणोपलभेद्धर्मं,
मधर्मम् चाप्य धर्मतः;
यद्य धर्मेण युज्येयुः
येष्य धर्मः प्रतिष्ठितः,
यदि धर्मेण युज्येरु
श्राध मंरुचयो जनाः
धर्मेण चरताम् धर्मः
तथा चैषाम् फलम् भवेत् ॥ १ ॥

[यदि अधर्म का आचरण करनेवाले को अधर्म-फल तथा धर्म का आचरण करनेवाले को धर्म-फल भी प्राप्त होते हैं तो समझ सकते हैं कि धर्मात्माओं को सुख तथा अधर्म व्यक्तियों को दुख प्राप्त होते हैं, लेकिन...]

यस्या दर्था विवद्धंते
येष्व धर्मः प्रतिष्ठितः
क्लश्यंते धर्मशीलाश्च
तस्मादेतौ निरर्थका ॥ २ ॥

[अधर्म का आचरण करनेवाले सुखी बन, धर्मावलंबियों को दुख प्राप्त होता है तो धर्म और अधर्म दोनों निरर्थक हो जाते हैं ।

धर्म और अधर्म

काकोलूकीयम

[४८]

चन्द्रसरोवर जल से भरा हुआ था। निरंतर प्रवहित होनेवाला एक सोता उसमें था। उसके समीप में अनेक मुनि तप किया करते थे। वहाँ पर अत्यधिक संख्या में हंस, कबूतर, बतख तथा बक भी थे। उसके तट पर विभिन्न प्रकार के महान वृक्ष थे। वृक्षों की शाखाएँ जल पर झुकी हुई थीं। पेड़ों पर पुष्प-लताएँ लिपटी थीं जिनसे गंध निकल रही थी। उन पुष्पों की खोज में आकर भ्रमर झंकार कर रहे थे। जल में ऊँची तरंगें उठकर झाग पैदा कर रही थीं। सरोवर में लाल व सफ़ेद कमल चमक रहे थे। किनारे पर स्थित घनी झाड़ियाँ सूर्य के ताप को रोककर उस प्रदेश को शीतल बनाये हुई थीं। हाथियों ने लौटकर इस सरोवर का सारा वृत्तांत चतुर्दंत को सुनाया।

इस पर चतुर्दंत तथा अन्य हाथी भी चन्द्रसरोवर के निकट आये और उसमें घुस पड़े। हाथियों ने पहले अपनी प्यास बुझाई और मन माने ढंग से नहाकर अपने जंगल को लौट गये।

सरोवर के किनारे पर स्थित अनेक बिलों में हजारों खरगोश निवास करते थे। हाथी जब पानी के वास्ते अंधा-धुंध दौड़कर आये, तब उनके पैरों के नीचे कुचलकर सैकड़ों खरगोश मर गये। इनसे भी अधिक घायल हो गये।

सभी हाथियों के चले जाने पर बचे हुए खरगोशों ने एक सभा बुलाई और उसमें यों चर्चा की: "अब हम लोगों का कर्तव्य क्या है? हमारा सर्वनाश निश्चित है। हाथी इस सरोवर में अब बराबर आया करेंगे। क्योंकि इस सरोवर
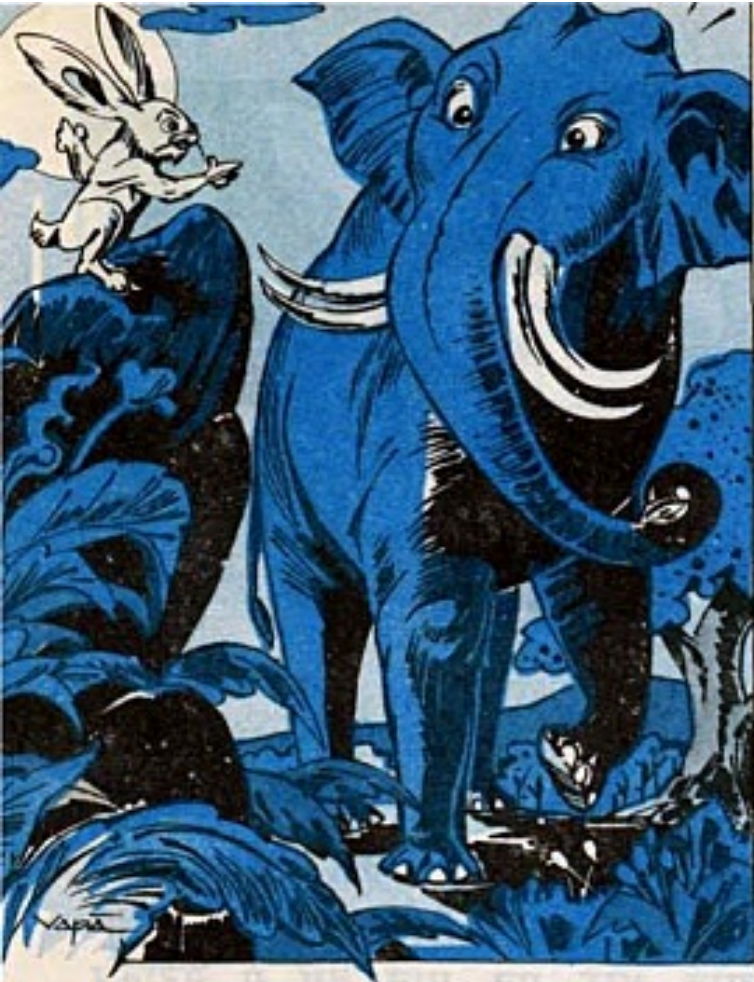
को छोड़कर आस-पास में कहीं पानी नहीं है। इसलिए यदि हम अपनी रक्षा करना चाहते हैं तो हमें ऐसा उपाय करना है जिससे हाथी इस सरोवर की ओर न पटके!"

इस पर विजय नामक वृद्ध खरगोश घायल खरगोशों, पत्नी व बच्चों को खोये हुए खरगोशों को देख बड़ा दुखी हुआ और बोला—"भाइयो, तुम लोग चिंता न करो। चन्द्रदेव में हमारा चिह्न है। उनकी मदद से कोई योजना बनाऊँगा।"

ये बातें सुन खरगोशों के राजा सिलीमुख ने यों कहा—"विजय, तुमने खूब कहा। तुम न्याय सूत्र जाननेवाले बुद्धिमान व्यक्ति हो। इसलिए तुम्हारा प्रयत्न सफल होगा। तुम कैसे इस समस्या को हल कर सकोगे, यह सारा दायित्व तुम पर ही छोड़ रहा हूँ। पर कार्य को किसी भी रूप में सफल बनाओ, हो आओ।"

विजय इस जिम्मेदारी को अपने कंधों पर लेकर दूसरे दिन प्रातःकाल चल पड़ा। उसे रास्ते में चतुर्दंत तथा अन्य हाथी सरोवर में जाते दिखाई दिये। हाथी देखने में काले बादल जैसे थे और उनके घींकार मेघ-गर्जन की याद दिला रहे थे। उन्हें देख विजय ने अपने मन में सोचा—'इन हाथियों के बीच जाना खतरे से खाली नहीं है। उनके पैरों के नीचे पड़ जाने पर मेरी हड्डियाँ भी चूर-चूर हो जायेंगी।' यों सोचकर वह एक ऊँची पहाड़ी शिला पर चढ़ गया और चतुर्दंत से पूछा—"हाथियों का राजा! आप कुशल हैं न?"

चतुर्दंत ने बड़ी मुश्किल से विजय को देख पूछा—"तुम कौन हो?"

"मैं राजदूत हूँ।" विजय ने कहा।

"तुम्हें किसने भेजा है?" चतुर्दंत ने फिर पूछा।

"चन्द्रदेव ने।" विजय ने उत्तर दिया।

"तुम्हें किसलिए भेजा है?" हाथी ने फिर पूछा।

"आप जानते हैं कि दूत का अपमान नहीं करना चाहिए। मेरे मालिक ने जो

बातें आप से निवेदन करने को कहा, वे बातें मैं आप को सुनाऊंगा। चन्द्रदेव ने आप से ये बातें निवेदन करने को कहा है–"सारा संसार जानता है कि चन्द्र सरोवर मेरा है। मगर आप सबने अन्यायपूर्वक उसमें प्रवेश करके उसकी पवित्रता नष्ट कर दी है। अलावा इसके शशांक कहलानेवाले मेरे चिह्न के रूप में रहनेवाले अनेक खरगोशों को तुम लोगों ने सरोवर के किनारे कुचलकर मार डाला है। इतना क्यों? तुम लोग मेरे सरोवर तथा मेरे खरगोशों को नष्ट करना बंद न करोगे तो तुम्हें भयंकर विपदा का सामना करना होगा! यदि मेरी सलाह को मान लिया तो तुम लोगों का बड़ा उपकार होगा। मेरी कृपा से मेरी चांदनी के प्रकाश में तुम लोग इस जंगल में स्वेच्छापूर्वक विहार कर रहे हो। अगर तुम लोगों ने मेरे सरोवर में फिर से प्रवेश करने की धृष्टता की तो मैं अपनी शीतल किरणों की जगह गरमी पैदा करके तुम्हारी मृत्यु का कारण बन जाऊंगा।"

यह संदेशा सुनकर चतुर्दंत डर गया और बोला–"मैंने चन्द्रदेव के प्रति बड़ा अन्याय किया है। तुम मुझे उनके पास ले जाओ, मैं उनसे क्षमा मांग लूंगा।"

इस पर विजय चतुर्दंत को सरोवर के निकट ले गया, सरोवर के जल में प्रतिबिंबित होनेवाले चन्द्रमा तथा नक्षत्रों को दिखाया। इसके बाद हाथी ने अपनी सूंड से जल ग्रहण करके अपने शरीर पर डाल लिया। जल में कंपन होने के कारण उसमें हजारों चन्द्रबिंब दिखाई दिये।

इसके बाद हाथी ने विजय से पूछा कि चन्द्रदेव उस पर क्यों नाराज़ हो गये हैं? विजय ने जवाब दिया–"क्योंकि तुमने जल का स्पर्श किया है।" फिर क्या था, हाथी घबरा उठा, चंद्रबिंब के सामने साष्टांग दण्डवत करके क्षमा मांगी–"मैं आइंदा कभी यहां पर न आऊंगा।" इसके बाद हाथी वहां से चला गया।

संसार के आश्चर्य :

१८६. "हाथी जैसे कुम्हाड़े!"

हम लोक कथाओं में अकसर पढ़ते हैं—"हमारे दादाओं के जमाने में हाथी जैसे बड़े कुम्हाड़े हुआ करते थे।" मगर ये "स्क्वाष" यह प्रमाणित करते हैं कि दक्षिण कनाड़ा तरकारियों की पैदावर में अमेरिका तथा यूरप के साथ स्पर्धा कर सकता है।

माया सरोवर

[१८]

[सर्पनख तथा सर्पस्वर नामक दो भाई जलाश्वों पर नाटी जाति की बस्ती में पहुँचे। सर्पनख ने कृपाणजित के कंठ में रस्से का फंदा कसा, नर वानर सर्पस्वर पर हमला करके उसे उठा ले गया। यह ख़बर मिलते ही जयशील और सिद्ध साधक बस्ती की ओर बढ़े, रास्ते में सर्पनख जलाश्व पर उन्हें दिखाई दिया। बाद...]

सर्पनख एक विशाल वृक्ष के नीचे पहुंचा। अपने वाहन को रोककर एक बार चारों ओर नज़र दौड़ाई। वहां पर उसे गंगन चुबी वृक्ष तथा कंटीली झाड़ियों के अतिरिक्त अपने भाई का कोई पता न चला। अतः वह उच्च स्वर में चिल्ला उठा–"सर्पस्वर! तुम कहाँ हो?"

उसकी चिल्लाहट का कोई उत्तर न मिला। इस पर वह अत्यंत निराश हो उठा, परंतु दूसरे ही क्षण क्रोध में आकर म्यान से तलवार खींच ली और सामने के वृक्ष के तने में जोर से गड़ाकर क़सम खाई–"यही मेरी शपथ है! अगर मैं अपने भाई को प्राणों के साथ देख न पाया तो उसका वध करनेवाले नर वानर और उसके मालिक की गर्दन काट दूंगा, तभी मेरा क्रोध शांत हो जाएगा और तब मैं इस प्रदेश से निकल पड़ूंगा।"

झाड़ी के पीछे छुपे जयशील मुस्कुराकर सिद्ध साधक से बोला–"हे साधक, तुमने इस सर्पनख की शपथ सुन ली है न? इसने जंगली वृक्षों को साक्षी बनाकर कठोर प्रतिज्ञा की है। इस पर हमें सावधानी के साथ निगरानी रखनी होगी।"

"जयशील! मेरा संदेह है कि अपने छोटे भाई को न पाकर इसका दिमाग उलट गया है। मगर इसे तो हमें प्राणों के साथ बन्दी बनाना है न? तुमने इस संबंध में क्या सोचा है?" सिद्ध साधक ने जयशील से पूछा।

लगता है कि सर्पनख तीव्र आवेश में है। ऐसे व्यक्ति को आत्म-समर्पण करने का आदेश देना बेकार है। वह अपने प्राणों का मोह छोड़कर लड़ने को तैयार हो जाएगा। इसलिए किसी उपाय से उसे बन्दी बनाना होगा...

जयशील यों सोचकर सिद्ध साधक से बोला–"सिद्ध साधक, तुम्हारा रूप और बोल-चाल का ढंग साधारण मनुष्यों से बहुत-कुछ भिन्न होता है। इसलिए तुम्हीं उसे बन्दी बना सकते हो। याद रखो, सर्पनख के प्राणों के साथ बन्दी होने में ही हमारा माया सरोवर में पहुंचना आधारित है।"

"जी हां! हमने इसके पूर्व अपनी असावधानी के कारण मकरकेतु को छोड़ दिया है। इसलिए अब उसके मित्र सर्पनख को हमें तब तक छोड़ना नहीं चाहिए, जब तक कि वह हमें माया सरोवर तक नहीं ले जाता है।" सिद्ध साधक ने अपनी राय व्यक्त की।

"हां, हम यही करने जा रहे हैं। तुम किसी भी उपाय से उसके निकट जाओ और उसकी तलवार पर क़ब्जा कर लो। तब उसे बन्दी बनाकर मैं उसके मुँह से सरोवर तक जाने का मार्ग जान लूंगा।" जयशील ने सुझाया।

इसके बाद सिद्ध साधक झाड़ियों के पीछे छुपते दूर पर स्थित पेड़ों की ओट में

चला गया। इस पर जयशील नेधीमे स्वर में नाटी जाति के सेनापति से कहा– "सेनापति, हम इस विचित्र आदमी की शक्ति और सामर्थ्यों से बिलकुल अपरिचित हैं। ज़रूरत पड़ने पर सिद्ध साधक की सहायता के हेतु तुम अपने वाहन भेड़े के साथ किसी पेड़ की आड़ में छिपे रह सकते हो?"

"महाशय! यह कौन बड़ा काम है? इस पानीवाले घोड़े के मालिक को मैं स्वयं पेड़ की डालों में से कूदकर इसके हाथ-पैर बांध सकता हूँ।" ये शब्द कहते नाटा सेनापति अपने वाहन के बंधे बेर की झाड़ों की ओर चल पड़ा।

इसके दो-तीन मिनट बाद सिद्ध साधक अपने शूल को उठाये पेड़ों की ओट से बाहर निकलते हुए चिल्ला उठा–"अबे, किसने मेरे पालतू साल वृक्ष पर तलवार चलाई है? उसकी कराहट सुनने पर मेरी निद्रा भंग हो गई है। जिसने यह अत्याचार किया है, वह तुरत मेरे सामने आ जावे! वरना उसे मेरे क्रोध का फल भोगना पड़ेगा।"

यह चिल्लाहट सुनकर सर्पनख ने झट से तलवार को पेड़ के तने से खींच लिया। साधक की ओर निशाना लगाकर खड़ा हो गया। तब साधक सर्पनख के निकट जाकर बोला–"अबे, तुम देखने में माया सरोवरेश्वर के सेवक मालूम होते हो, यह बात सच है न?"

सर्पनख यह सोचकर भय और संभ्रम के साथ कांपने लगा कि इस भयंकर जंगल में उसे देखते ही उसके मालिक का पता लगानेवाला यह व्यक्ति कोई बड़ा मांत्रिक होगा। उसी वक़्त सिद्ध साधक अपनी चाल के सफल होते देख मन ही मन प्रसन्न होते हुए बोला–"अबे, माया सरोवरेश्वर के सेवक होने के घमण्ड में आकर तुम अब तक ठाठ से घोड़े पर बैठे हो, उतर जाओ। मेरे सामने घोड़े पर सवार होने की धृष्टता करते हो?

सिद्ध साधक अट्टहास कर बोला–"अरे सर्पनख! तुम्हारे ये सवाल बेमतलब के हैं। मैं तुम्हारे मित्र मकरकेतु को भी जानता हूँ। याद रखो, इस तलवार का तुम्हारे हाथ में रहना तुम्हारे लिए ही खतरनाक है। उसे जल्दी नीचे फेंक दो।" यों कहते शूल उठाकर सर्पनख की ओर बढ़ा।

सर्पनख पल भर के लिए चकित रहा, फिर तत्काल अपने को संभालकर दांत मींचते हुए बोला–"अब मैं समझ गया कि तुम कौन हो? नर वानर के मालिक कृपाणजित ने तुम्हें तथा तुम्हारे मित्र को भी इस जंगल में कहीं देखा है। तुम कापालिक हो न?"

सिद्ध साधक का क्रोध भड़क उठा। उसने सर्पनख पर शूल का प्रहार करना चाहा, पर दूसरे ही क्षण स्मरण आया कि जयशील ने उसे प्राणों के साथ बन्दी बनाने को कहा था, लेकिन यह आसानी से बन्दी होनेवाले जैसे नहीं लगता। उस वक़्त सिद्ध साधक के मन में एक उपाय सूझ पड़ा। उसने शूल को जमीन में गाड़कर कहा–"अरे सर्पनख! मैं कोई ऐसे-वैसे साधारण कापालिक नहीं हूँ। मैं अपने शूल को दूर फेंक देता हूँ। तुम अपनी तलवार

दूसरे ही क्षण सर्पनख जलाश्व पर से नीचे कूद पड़ा। साधक ने उसके निकट जाकर पूछा–"वह तलवार मेरे हाथ दे दो।"

यद बात सुनते ही सर्पनख ने चार-पांच क़दम पीछे हटाये। सिद्ध साधक की ओर शंका भरी दृष्टि दौड़ाकर कहा–"मेरी तलवार से तुम्हें क्या काम है? इसके पीछे कोई दगा है, षड़यंत्र है! तुम मुझे बेहथियार बनाकर मार डालना चाहते हो? तुम वास्तव में मेरे मालिक का नाम कैसे जानते हो? इस पेड़ की कराहट सुन सकनेवाले महान मांत्रिक हो तुम?"

क[illegible] दो। तब हम इतमीनान से बात करेंगे।"

"ओह, कापालिक! तुम्हारी चाल मैं समझ गया। तुम मुझे बेहथियार बनाकर किसी क्षुद्र देवता को बलि देना चाहते हो न? तब तो तुम जल्दी तैयार हो जाओ, मैं अभी तुम्हें परलोक का यात्री बना देता हूँ।" यों कहते सर्पनख तलवार उठाये सिद्ध साधक पर तेजी के साथ उछलने को हुआ।

सिद्ध साधक ने खतरे को भांप लिया, जमीन में गड़े शूल को उठाने को था, तभी सर्पनख उसके निकट पहुँचकर उसके कलेजे में तलवार भोंकने को हुआ, मगर दूसरे ही क्षण नाटे सेनापति ने पीछे से आकर अपने भेड़े से सर्पनख को टकरा दिया। सर्पनख चीखकर औंधे मुँह गिर पड़ा। उसके हाथ की तलवार छूटकर दूर जा गिरी।

सिद्ध साधक ने तेजी के साथ जाकर तलवार पर पैर रखा, ठठाकर हँसते हुए बोला–"नाटा सेनापति! तुम्हारी समय-स्फूर्ति प्रशंसनीय है! महा काल सदा सर्वदा तुम्हारी रक्षा करते रहेंगे। जय महा काल की!"

उसी वक़्त वहाँ पर जयशील आ पहुँचा। उसने सर्पनख की भुजाएँ पकड़कर ऊपर उठाया। तब कहा–"अरे सर्पनख! तुम्हारा नाम ही कुछ विचित्र है। तुम्हारा व्यवहार तो और भी विचित्र है। हमने

सर्प के दाढ़े देखे, मगर नाखून नहीं देखे हैं। सिद्ध साधक जैसे व्यक्ति को तुम अपनी बेपैनीवाली तलवार से मार डालना चाहते हो?"

"माया सरोवरेश्वर की जय! तुम्हीं मेरी रक्षा करो।" यों कहकर सर्पनख कराह उठा, तब बोला–"मैं नहीं जानता कि तुम लोग कौन हो? पर धोखे से तुमने मुझे निरायुध बनाया है। वह तलवार अगर मेरे हाथ होती तो अब तक तुम लोगों के टुकड़े-टुकड़े कर देता।"

जयशील चुपचाप सिद्ध साधक के निकट गया और पूछा–"साधक, सर्पनख की तलवार मेरे हाथ दे दो।"

सिद्ध साधक ने अपने पैर के नीचे दबी तलवार उठाकर जयशील के हाथ दे दी। जयशील ने उसे ले जाकर सर्पनख के हाथ देकर कहा–"अरे सर्पनख! तुम्हारा मालिक माया सरोवरेश्वर कायर है! वह धोखे से हिरण्यपुर के राजकुमार और राजकुमारी को उठा ले गया है! उसका सेवक होकर भी तुम ढींग हांकते हो? लो, मेरे साथ खड्ग युद्ध करो। मैं तुम्हें मारूँगा नहीं, तुम से मुझे एक जरूरी काम लेना है।"

"हाँ, मैं जानता हूँ कि वह कौन काम है? लो, तैयार हो जाओ लड़ने को।" यों कहते सर्पनख ने जयशील के कंठ की ओर तलवार का निशाना लगाकर फेंक दिया।

जयशील ने अपनी तलवार से सर्पनख की तलवार को हटाकर अपने बायें पैर से उसके घुटने पर लात मार दी। सर्पनख गिर पड़ा, उठते हुए बोला–"यह तो अन्याय है। यह कैसा खड्ग युद्ध है?" ये शब्द कहते वह फिर से जयशील के साथ लड़ने को तैयार हो गया।

"मैंने पहले ही बताया है कि किसी भी हालत में मैं तुम्हारा वध न करूँगा। तुम्हारा मित्र मकरकेतु को जो कार्य करना था, वह तुम्हारे द्वारा कराने जा रहा हूँ।"

इन शब्दों के साथ सर्पनख की तलवार को अपनी तलवार से काट डाला और दायें पैर से उसके पेट पर लात मारी ।

उस प्रहार से सर्पनख ज़ोर से चिल्ला उठा और दूर जा गिरा । उसके हाथ की तलवार दूर जा गिरी । वह उठकर खड़े होते हुए बोला–"छी, छी, यही खड्ग युद्ध है? मल्ल युद्ध से भी निकृष्ट मालूम होता है ।"

"तब तो तुम मेरे साथ मल्ल युद्ध ही करो ।" यों कहते जयशील सर्पनख पर टूट पड़ा, उसकी कमर पकड़कर ऊपर उठाया और सिद्ध साधक से बोला–"साधक, तुम इसे इस प्रकार पकड़ लो जिससे गह नीचे गिरकर मर न जाय! इसके बाद तुम चाहे तो अपने शूल से चुभोकर इसे मार डालो ।" ये शब्द कहते उसे दूर फेंक दिया ।

सिद्ध साधक सर्पनख को ऊपर ही पकड़ने को हुआ, पर उसके हाथ में सर्पनख की गर्दन और एक पैर मात्र आ गया । वह प्रसन्न हुआ, सर्पनख को ऊपर ही घुमाकर नीचे गिराते हुए बोला–"ओह! यह तो महा काल के लिए एक बलि पशु बन सकता है । इसमें कोई संदेह नहीं है ।"

सर्पनख चित गिर पड़ा, उठकर बैठ गया । थर थर कांपते हुए बोला–"महाशयो, मेरा वध मत करो । मैं और मेरा छोटा भाई, हम दोनों मकरकेतु की खोज करते इस प्रदेश में आ गये हैं । मेरे

इन शब्दों के साथ सर्पनख की तलवार को अपनी तलवार से काट डाला और दायें पैर से उसके पेट पर लात मारी।

उस प्रहार से सर्पनख ज़ोर से चिल्ला उठा और दूर जा गिरा। उसके हाथ की तलवार दूर जा गिरी। वह उठकर खड़े होते हुए बोला—"छी, छी, यही खड्ग युद्ध है? मल्ल युद्ध से भी निकृष्ट मालूम होता है।"

"तब तो तुम मेरे साथ मल्ल युद्ध ही करो।" यों कहते जयशील सर्पनख पर टूट पड़ा, उसकी कमर पकड़कर ऊपर उठाया और सिद्ध साधक से बोला—"साधक, तुम इसे इस प्रकार पकड़ लो जिससे गह नीचे गिरकर मर न जाय! इसके बाद तुम चाहे तो अपने शूल से चुभोकर इसे मार डालो।" ये शब्द कहते उसे दूर फेंक दिया।

सिद्ध साधक सर्पनख को ऊपर ही पकड़ने को हुआ, पर उसके हाथ में सर्पनख की गर्दन और एक पैर मात्र आ गया। वह प्रसन्न हुआ, सर्पनख को ऊपर ही घुमाकर नीचे गिराते हुए बोला—"ओह! यह तो महा काल के लिए एक बलि पशु बन सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है।"

सर्पनख चित गिर पड़ा, उठकर बैठ गया। थर थर कांपते हुए बोला—"महाशयो, मेरा वध मत करो। मैं और मेरा छोटा भाई, हम दोनों मकरकेतु की खोज करते इस प्रदेश में आ गये हैं। मेरे

छोटे भाई को एक भयंकर नर वानर उठा ले गया है। अगर वह अब तक ज़िंदा हो तो उसे खोजकर अपने रास्ते आप चला जाऊँगा।"

"सर्पनख! ऐसे मान जाओ।" ये शब्द कहकर जयशील सिद्ध साधक से बोला–"सिद्ध साधक, इसकी बलि देने में अभी काफी समय है। फिलहाल रुक जाओ।" इसके बाद सर्पनख से कहा–"अबे, तुम्हारे छोटे भाई को उठा ले जानेवाले नर वानर का मालिक कृपाणजित अभी तक ज़िंदा है। वह मेरा दुश्मन है। मैं तुम्हारे भाई की खोज करने में तुम्हारी मदद करूँगा; लेकिन पहले तुम हमें वचन दो कि तुम हम लोगों को माया सरोवरेश्वर के पास अवश्य ले जाओगे।"

"माया सरोवरेश्वर के पास उनकी अनुमति के बिना कोई भी मानव प्राणों के साथ पहुँच नहीं सकता।" सर्पनख ने कहा।

"तब तो हमें सरोवर का स्थान बतला दो, वहाँ पर जाने का प्रयत्न हम खुद करेंगे। इस प्रयत्न में हमारे प्राण भी निकल जाय, तुम इसके जिम्मेवार न होगे। इसका क्या जवाब दोगे?" जयशील ने पूछा।

सर्पनख का चेहरा श्याह हो उठा। उसने कहा–"अगर मैं उस सरोवर का स्थान बतला दूँ तो मेरा सिर फूट जाएगा। ऐसा शाप मुझे प्राप्त हो गया है।"

"मैं ही उस शाप को अमल करूँगा।" इन शब्दों के साथ जयशील ने अपनी तलवार का सर्पनख के सिर पर निशाना लगाया, तभी दूर पर चिल्लाहटें सुनाई दीं, सबने उस ओर देखा।

कृपाणजित एक जलाश्व पर सवार हो जयशील की ओर तेजी के साथ आने लगा–"जयशील कहाँ? उसका दोस्त कापालिक कहाँ पर है? मैं उन दोनों को अपनी तलवार की बलि दूँगा।"

(और है)

एक समय का स्वर्ग

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, तुम जब अपने श्रम में सफल होगे, तब वह ज़रूर तुम्हें प्राप्त होगा। मगर कुछ लोग अनायास ही अपने प्रयत्न के एक हज़ार गुने अधिक फल को प्राप्त कर लेते हैं। लेकिन ऐसे लोग अपने भाग्य का अधिक समय तक अनुभव नहीं कर पाते। इसके उदाहरण स्वरूप में तुम्हें चिदंबर की कहानी सुनाता हूं। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: चिदंबर नामक व्यक्ति अत्यंत गरीब था। वह लकड़ी काटकर अपने परिवार को चला लेता था। पर उसे भर पेट खाना भी मयस्सर नहीं होता था, फिर भी वह सदा सर्वदा

बेताल कथाएं

सुख-भोगों के सपने देखा करता था। एक बार वह जंगल में एक पेड़ काट रहा था, तब पेड़ के नीचे स्थित बांबी में से एक साँप फुत्कारते ऊपर उठा। चिदंबर ने अपनी कुल्हाड़ी उसकी गर्दन पर दे मारी। साँप का सिर कट गया। दूसरे ही क्षण वहाँ पर एक दिव्य पुरुष प्रत्यक्ष हुआ। उसने कहा-"हे चिदंबर, तुमने मुझे शाप से मुक्त किया। मैं यक्ष था, पर एक मुनि के शाप से मैं साँप बन गया था, तुम कोई वर माँग लो।"

चिदंबर ने यक्ष को प्रणाम करके कहा- "महानुभाव, मुझ जैसे गरीब के लिए भोजन के अतिरिक्त और चाहिए ही क्या? भोजन तो किसी न किसी प्रकार प्राप्त हो ही रहा है। मगर मनुष्य के श्रम करने पर भी प्राप्त न होनेवाली कई चीज़ें होती हैं। मेहर्बानी करके मुझे आप अपने यक्षलोक में ले जाइए। वहाँ पर मैं आप के वैभव को देख प्रसन्न हो जाऊँगा।"

दरिद्रता का अनुभव करनवाले चिदंबर ने धन और धान्य की कामना न करके देव लोक को देखने की इच्छा प्रकट की, यह बात यक्ष को अत्यंत विचित्र प्रतीत हुई। फिर भी उसने वचन दिया था, इसलिए उसकी इच्छा की पूर्ति करने की कामना से कहा-"अच्छी बात है, ऐसा ही होगा; मगर तुम इस वेष में हमारे लोक में प्रवेश नहीं कर सकते। इसलिए मैं तुम्हें भी एक यक्ष का रूप प्रदान कर अपने साथ ले जाऊँगा; लेकिन वहाँ पर तुम्हें बड़ी सावधानी बरतनी होगी। मानवों के लक्षण वहाँ पर तुम्हें प्रकट होने नहीं देना चाहिए। यदि तुम असावधान रहोगे तो तुम्हें तथा मुझे भी खतरों का सामना करना होगा।"

चिदंबर ने मान लिया। यक्ष उसे यक्ष के रूप में बदलकर अपने लोक में ले गया।

चिदंबर को देवताओं का लोक एक अद्भुत सपने जैसा प्रतीत हुआ। यक्ष जाति, उनकी संपत्ति, स्वेच्छा, सुखमय

जीवन, आहार-विहार तथा यक्ष कन्याओं के सौंदर्य को देखने पर चिदंबर को लगा कि पृथ्वी लोक में करोड़पतियों के लिए भी ऐसा वैभवपूर्ण जीवन संभव नहीं है। जहां भी देखो, गानेवाले, नृत्य करनेवाले तथा संगीत के वाद्य यंत्र बजानेवाले ही उसे नज़र आने लगे। इस पर चिदंबर ने सोचा कि पृथ्वी लोक में एक हज़ार वर्ष जीने की अपेक्षा देव लोक में एक दिन बिता देना कहीं उत्तम है। इतने में एक यक्षिणी मंदहास करते चिदंबर के निकट आई और उसका हाथ पकड़कर विहार करने के लिए निमंत्रण दिया।

यक्षिणी के सौंदर्य को देखने पर चिदंबर को लगा कि वह पागल होता जा रहा है, उसने अत्यधिक उत्साह में आकर कहा-"ओह, तुम कितनी सुंदर हो!" तुम जैसी रूपवती नारियां हमारे लोक में एक भी दिखाई नहीं देती।"

दूसरे ही क्षण यक्षिणी ने क्रोध में आकर चिदंबर का हाथ झटक दिया और कहा-"मूर्ख, तुम कौन हो? यक्ष के वेष में तुम यहां पर क्यों भटक रहे हो?"

चिदंबर डर के मारे कांप उठा और यक्ष की खोज की; पर कहीं उसका पता न चला। इस पर चिदंबर ने विवश होकर यक्षिणी को सारा वृत्तांत सुनाया और उससे क्षमा मांगते हुए निवेदन किया-"मैंने मूर्खतावश ऐसा वर मांग लिया है। मुझे कृपया अपने लोक में भेज दीजिए।"

यक्षिणी ने शांत होकर कहा–"चूंकि तुमने एक यक्ष को शाप से मुक्त किया है, इसलिए में तुम्हें क्षमा कर देती हूँ। इस कारण तुम कोई अच्छा वर माँग लो।"

"देवी! मुझे जैसे दरिद्र के लिए खाने से बढ़कर और कौन समस्या हो सकती है? दिन भर कड़ी मेहनत करने पर भी मेरा परिवार भर पेट खाना प्राप्त नहीं कर पा रहा है। इसलिए आप कृपया मुझे कोई ऐसा वरदान दीजिए, जिससे हम लोग ज़िंदगी भर सुखपूर्वक बिना परेशानी के भोजन प्राप्त कर सके।" चिदंबर ने प्रार्थना की।

यक्षिणी ने उसके हाथ में एक पात्र देकर समझाया–"यह एक अक्षय पात्र है। तुम खाने को जब भी कुछ चाहोगे, यह पात्र तुम्हें दे देगा। इसकी मदद से तुम्हारा परिवार न केवल राजोचित भोजन पा सकता है, बल्कि जितने लोगों को चाहे, उतने लोगों को तुम दावत दे सकते हो। जो खाने व पीने योग्य हो, वे सब यह पात्र तुम्हें दे देगा; मगर याद रखो कि तुम कोई अनुचित वस्तु की कामना करोगे तो तुम अपनी पूर्व स्थिति को प्राप्त करोगे।"

इस पर चिदंबर ने श्रद्धापूर्वक उस पात्र को लेकर अपनी आँखों से लगाया, इसके बाद उसने आँखें खोलकर देखा तो वह अपने को अपने ही घर मे बिस्तर पर पड़ा पाया। वह उठ बैठा, उसने सोचा कि एक सपना देखा है, लेकिन उसके बाजू में अक्षय पात्र पड़ा हुआ था। उसने पात्र को नमस्कार किया और लड्डु तथा खीर की कामना की, तत्काल वे दोनों चीज़ें प्रत्यक्ष हुईं। चिदंबर को साबित हुआ कि उसका अनुभव केवल सपना नहीं है।

अक्षय पात्र की महिमा तुरंत उसकी पत्नी और उसके बच्चों पर प्रकट हो गई। दूसरे दिन यह बात गाँव भर के गरीब लोगों पर भी प्रकट हो गई। इसके बाद चारों तरफ़ के लोगों को अक्षय पात्र की दावतें प्राप्त हुईं।

फिर क्या था, समाज में चिदंबर की प्रतिष्ठा बढ़ी। उसके कतिपय घनिष्ट मित्र भी बने। वे आधी रात तक उसके साथ बैठते, यदि तब तक वह भोजन न करता तो वे भी इंतज़ार करते और उसी के साथ देरी से भोजन करते।

एक दिन रात को बड़ी देर करके चिदंबर तथा उसके दोस्त खाने बैठे। तब उसके मित्रों ने उत्साह में आकर शराब माँगी। चिदंबर ने आज तक अक्षय पात्र से शराब न माँगी थी। मगर उसने अपने मित्रों को संतुष्ट करने के लिए आज माँगी। दूसरे ही क्षण अक्षय पात्र ने पर्याप्त शराब दी। चिदंबर भी अपने दोस्तों के साथ खूब चखकर पिया। उसके दोस्त लोटते नाचने भी लगे।

तुरंत चिदंबर को यक्ष नारियों के नृत्य याद हो आये, उसने उन नृत्यों की बड़ी तारीफ़ की। दोस्तों ने उससे अनुरोध किया—"हमें भी यक्षिणियों का नृत्य दिखाओ तो! यक्ष-पात्र क्या एक यक्षिणी को बुलाकर नृत्य नहीं करा सकता?"

शराब के नशे में चूर चिदंबर को उसके दोस्तों की इच्छा उचित ही प्रतीत हुई। उसने अक्षय पात्र से प्रार्थना करते हुए एक यक्षिणी की माँग की, मगर अक्षय पात्र ने कुछ न किया। चिदंबर ने अनेक प्रकार से प्रार्थना की, पर कोई प्रयोजन न रहा। उसे लगा कि दोस्तों के बीच उसका

बड़ा ही अपमान हो गया है। आवेश में आकर उसने अक्षय पात्र पर लाठी चलाई, वह टुकड़े-टुकड़े हो गया।

दूसरे दिन चिदंबर कुल्हाड़ी कंधे पर रख जंगल में चला गया और लकड़ी काटकर अपना भरण-पोषण करने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, सर्व प्रथम यक्ष ने चिदंब्रर से वर माँगने को कहा, तब अपने खाने की समस्या की परवाह न करनेवाले चिदबर ने यक्षिणी से उसी को अपने जीवन की बड़ी समस्या बताकर अक्षय पात्र क्यों ग्रहण किया? अक्षय पात्र द्वारा समाज में अत्यंत प्रतिष्ठा प्राप्त कर उसने उस पर क्यों अपना अहंकार दर्शाया? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"चिदंबर अपने जीवन के प्रति वास्तविक दृष्टिकोण रखनेवाला व्यक्ति नहीं। इसीलिए भर पेट खाना न मिलने पर भी वह सुख-वैभव के सपने देखा करता था। यक्ष ने उससे जब वर माँगने को कहा, तब उसने यक्ष लोक देखने की कामना प्रकट की। इस प्रकार उसके सपने सफल हुए हैं, मगर उसी समय वह यक्षिणी के शाप का शिकार बना और उसे उसका वास्तविक मानव रूप प्राप्त हुआ। मगर अक्षय पात्र की वजह से वह समाज में एक करोड़पति जैसा ओहदा प्राप्त कर पाया। उस वक़्त उसने सोचा कि वह सचमुच ही करोड़पति बन बैठा है और वह ऐसी मानसिकता को बढ़ाने लगा जो करोड़पतियों में ही चल सकती थी। मगर वास्तव में एक सच्चे करोड़पति का जो भौतिक आधार होता है, वह उसके पास न था, उसका आधार अक्षय पात्र था। यह बात वह भूल गया, उसी पात्र पर अपना अहंकार प्रकट करके वह अपनी पूर्व स्थिति को प्राप्त हुआ।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
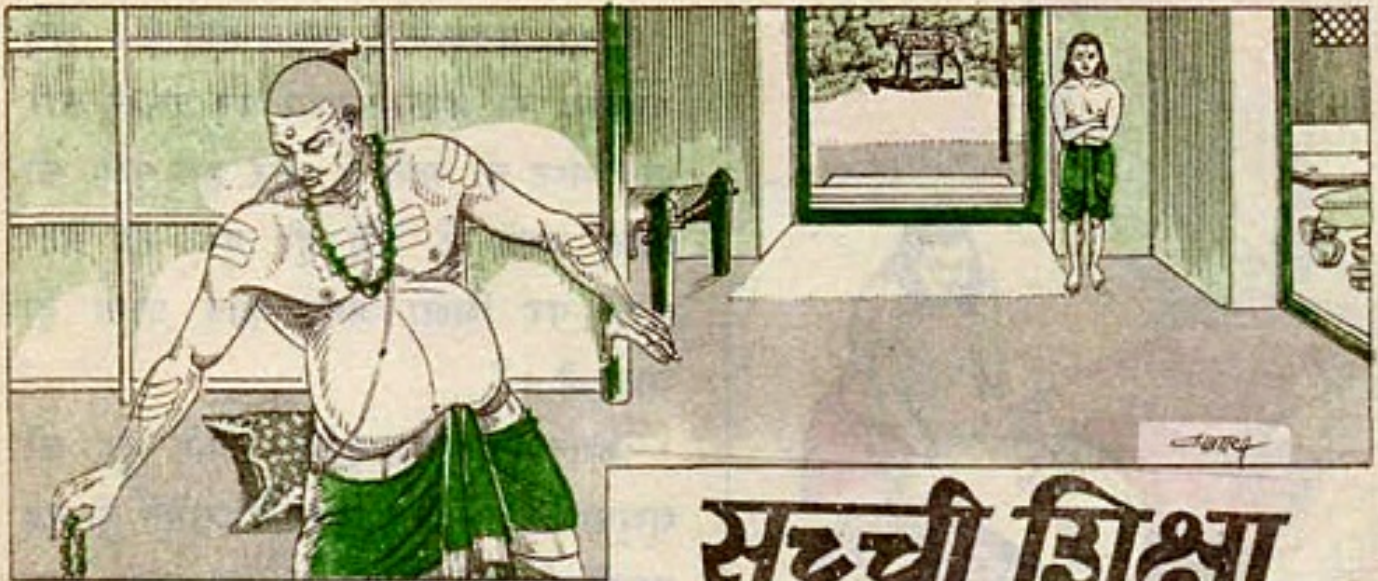
सच्ची शिक्षा

कमल प्रसाद अक़्लमंद था, पर वह अपने गाँव में शिक्षा प्राप्त न कर पाया। क्योंकि उस गाँव के गुरु जीवनदास के व्यवहारों में कोई क्रमबद्धता न थी। जब मन में आया, विद्यार्थियों को पढ़ाता था। सूर्योदय के बड़ी देर बाद जागता था, रोज नहाता तक न था।

जीवनदास के यहाँ कमल प्रसाद एक महीना ही पढ़ पाया था कि उसके पिता उसे पड़ोसी गाँव में अपने रिश्तेदारों के घर ले गया और मातंग नामक गुरु के यहाँ कमल की शिक्षा का प्रबंध किया। मातंग चरित्रवान था, वह अपने शिष्यों को अच्छी आदतें सिखलाया करता था।

गुरु के आदेशानुसार कमल प्रति दिन प्रातःकाल जागता, काल कृत्य समाप्त कर नदी में जाकर नहाता, तब मंदिर में जाकर प्रार्थना करता, इसके बाद ही गुरु के घर लौट आता। उस समय मातंग जप करते दिखाई देता। जप के समाप्त होने में दो घंटे लग जाते। इसके बाद मातंग भोजन करके विश्राम करता। संध्या को मातंग के कुछ अन्य कार्यक्रम होते थे, उनके समाप्त होते रात के खाने का वक़्त हो जाता। कमल भोजन करके लौटता, तब गुरु उसे आदेश देता कि भोजन के तुरंत बाद पढ़ना कोई अच्छी आदत नहीं है, फिर थोड़ी ही देर में निद्रा का समय हो जाता; वह सो जाता। यही कमल की दिनचर्या थी।

गुरु मातंग ने उसे समझाया—"तुम इस बात की चिंता न करो कि तुम्हारी पढ़ाई ठीक से नहीं चल रही है। अगर तुम नियमों के द्वारा अपने शरीर को अनुशासन

में रखोगे तो पढ़ाई अपने आप आ जाएगी ।"

आखिर कमल पर यह रहस्य प्रकट हो गया कि मातंग के शिष्यों को अपने आप शिक्षा प्राप्त कर लेनी है, पर वे कभी किसी को नहीं पढ़ायेंगे । दो महीने बाद कमल का पिता उसे एक दूसरे गाँव में ले गया, वहाँ पर अपने रिश्तेदारों के घर पर रखा ।

उस गाँव में कमल श्रीपाणि नामक गुरु के यहाँ पढ़ने लगा । श्रीपाणि में अच्छी आदतें थीं । पर हठ व शठ न थे । पूजा तो करते थे, पर दिन भर नहीं करते । उन्होंने कमल को यों समझाया—
"गुरु तो भगवान के समान होते हैं । जैसे भगवान को प्रणाम करने पर हमारे सारे पाप नष्ट हो जाते हैं और हम पुण्य को प्राप्त करते हैं, वैसे ही गुरु की सेवा करने पर शिक्षा अपने आप प्राप्त हो जाती है ।"

कमल ने श्रद्धापूर्वक अपने गुरु की शुश्रूषा की । सवेरे निद्रा से जागते ही वह गुरुजी की पूजा का मंदिर साफ़ करता, पूजा की सारी तैयारियाँ करता, गुरु जब पूजा करने बैठता, तब वह गाय का दूध दुहकर गुरु पत्नी को दे देता । गुरु पत्नी जब रसोई बनाने लग जाती तब कमल गुरु के बच्चों को खिलाता, फिर खाने का सामान खरीद लाता, तब खेत में जाकर खेतीबारी का निरीक्षण करता । उसका दुपहर का खाना खेत पर ही पहुँच जाता । थका-मांदा वह शाम को घर लौटता, गुरु अपने शिष्य कमल के लिए गरम पानी का प्रबंध कराता । कमल आराम से नहा-धोकर खाना खा लेता । जब गुरु सोने के लिए अपने बिस्तर पर लेट जाता तो कमल उसके पैर दबाता । उस वक़्त गुरु कमल को गुरु सेवा करके महान ज्ञानी बने शिष्यों की कहानियाँ सुनाता, कमल उन कहानियों को बड़ी श्रद्धा के साथ सुनता ।

वहाँ पर भी कमल समझ गया कि शिक्षा तो कोई नहीं देता, स्वयं अर्जित करनी होती है। इसके बाद कमल के पिता ने उसे एक दूसरे गुरुकुल में भेजा। उस गुरुकुल का आचार्य शंकर स्वभाव से अच्छा था। उसके मन में शिष्यों के द्वारा अपनी सेवा कराने की भावना भी कदापि न थी। मगर वह स्वभाव से महान क्रोधी था। शिष्यों पर अगर वह नाराज़ हो जाता तो वह उनसे दो महीनों तक कसकर खेती का काम ले लेता था। उन दिनों में उन्हें बिलकुल पढ़ाता तक न था। कमल ने जिस दिन गुरुकुल में प्रवेश किया, उस दिन आचार्य शंकर के सभी शिष्य खेती का काम कर रहे थे। गुरुकुल में प्रवेश करने के दो दिन बाद कमल ने भी खेत के काम में प्रवेश किया।

खेत के काम की कोई सीमा न होती थी, क्यों कि कोई न कोई बहाना करके गुरु शिष्यों की सजा बढ़ा देता था। कमल को लगा कि इस तरह उसकी सारी ज़िंदगी खेती के काम में सर्फ़ हो जाएगी। इस बार उसने उस गुरुकुल को छोड़ने का अपने मन में स्वयं निश्चय कर लिया और दूसरे गाँव के सुगात्र नामक एक गुरु की सेवा में पहुँचा।

सुगात्र संगीत प्रेमी था। उसने अपने गुरु के यहाँ तंबूरा का अभ्यास करके संगीत का पूरा ज्ञान प्राप्त किया था। वह कमल के हाथ तंबूरा देकर स्वयं गाने लगा...
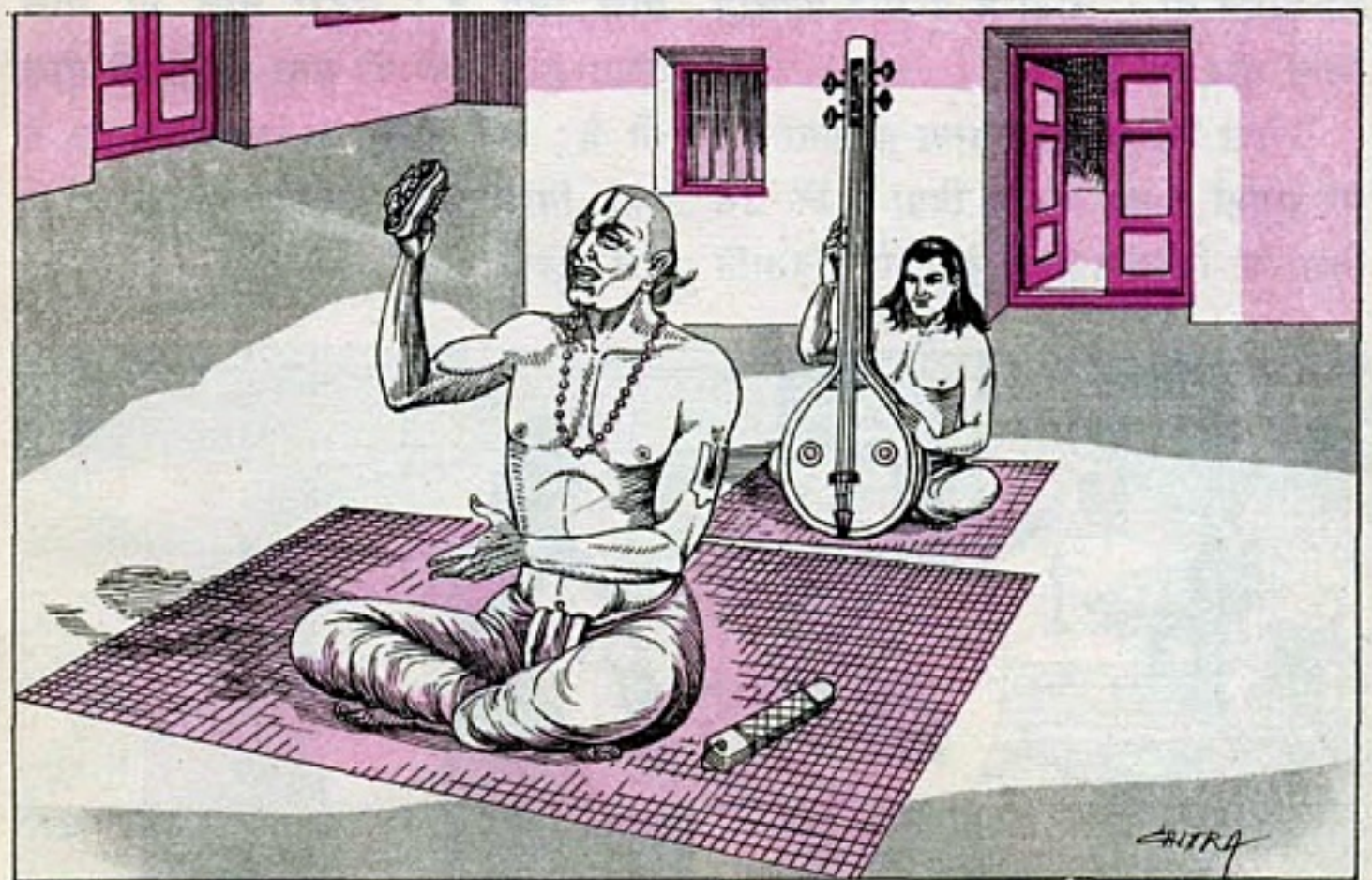
दो वर्ष तक कमल कई गाँवों में गया। हर जगह उसे लगा, पढ़ाई तो स्वयं प्राप्त कर लेनी है। आखिर उसने अपने गाँव लौटने की बात सोची, पर उसे स्मरण आया कि वहाँ के गुरु के अपने कोई नियम तक नहीं हैं। इसलिए उसने अपना यह विचार बदल लिया।

इस बीच कमल को मालूम हुआ कि उसके गाँव में कोई युवक आकर दर्शन शास्त्र पर नियमित रूप से व्याख्यान दे रहा है। कमल भी उसके व्याख्यान सुनने अपने गाँव पहुँचा। व्याख्यान धारा-प्रवाह से चला। अंत में कमल जब उसका अभिनंदन करने उसके निकट पहुँचा तो उसके आश्चर्य की कोई सीमा न थी। वह युवक और कोई न था, उसी के गाँव का माधव था। दोनों ने परस्पर पहचान लिया और गले मिले।

"मेरा विद्याभ्यास समाप्त हो गया है। मेरे गुरुजी ने मुझे आदेश दिया है कि उस विद्या का विस्तार करने के लिए गाँव-गाँव घूमकर मैं एक वर्ष तक व्याख्यान दूँ।" माधव ने कहा।

कमल ने विस्मय में आकर पूछा—"दो साल पूर्व तुम केवल वर्णमाला का ज्ञान रखते थे। इतने अल्प समय में ऐसी प्रतिभा प्रदान करनेवाले तुम्हारे गुरु कौन हैं?"

"दो साल का मतलब सैकड़ों दिन होता है। यह कम अवधि कैसे हो सकती है? तुम जानते ही हो कि आचार्य जीवनदास ही मेरे गुरु हैं। संभवतः तुमने भी अत्यधिक ज्ञान प्राप्त किया होगा!" माधव ने पूछा।

"मैंने एक अच्छे आचार्य की खोज करते अच्छी आदतें ज़रूर सीख ली हैं। मैंने परिवार, खेत व बगीचों के सारे काम सीख लिय हैं। तंबूरा वाद्य भी सीख लिया है। बड़ों की सेवा करना भी सीख ली है; अब जाकर आचार्य जीवनदास के यहाँ विद्याभ्यास करूँगा।" कमल ने उत्तर दिया।

भाग्यवान कौन है?

एक नवाब के दो पुत्र थे। उनके गुरु मौल्वी साहब ने उनकी गुरु भक्ति की परीक्षा लेने के ख़्याल से कहा–"मेरे जूते अमुक जगह हैं, उन्हें लेते आओ।"

दोनों शिष्य तुरंत दौड़ पड़े। कौन जूते उठा लाये, इस पर थोड़ी देर दोनों ने झगड़ा किया और आख़िर समझौता करके दोनों एक एक जूता उठा ले आये।

यह बात नवाब को मालूम हुई। उन्होंने मौल्वी साहब को बुलवाकर इधर-उधर की बातें करने के बाद पूछा–"क्या आप बता सकते हैं कि आज के युग में कौन ज्यादा भाग्यवान हैं?"

"हुजूर से बढ़कर भाग्यवान कौन हो सकते हैं?" मौल्वी ने जवाब दिया।

"ऐसी बात नहीं, जिसके जूते ढोने के लिए नवाब के दो लड़के झगड़ा करते हैं, वह क्या भग्यवान नहीं?" नवाब ने पूछा।

"ऐसे सुपुत्रों को जन्म देनेवाले वह नवाब न मालूम और कितने बड़े भाग्यवान हैं?" मौल्वी का उत्तर था।

इस पर नवाब ने प्रसन्न होकर मौल्वी को इनाम दिया।

समय की सूझ

बात बहुत पुरानी है। आल्प्स पर्वतों की बर्फ़ीली घाटी में हिमदेश नामक एक देश था। राजा ओमस उस देश का शासक था। उसकी इकलौती पुत्री स्नोह्वाइट बड़ी ही रूपवती थी। उसकी अट्ठारह साल की उम्र में राजा का निधन हो गया जिससे स्नोह्वाइट एकाकिनी बनी, फिर भी वह हताश न हुई। वह अत्यंत बुद्धिमती और विवेकवती थी। उसने शासन संबंधी सारी बातें अपने पिता के जीवन काल में ही सीख ली थीं।

स्नोह्वाइट के सौंदर्य का समाचार सुनकर कई राजकुमार उसके साथ विवाह करने आगे आये; मगर उसने अपने विवाह के लिए एक शर्त रखी। वह यह थी कि उसके साथ विवाह करने के लिए एक परीक्षा में सफल होनी है। ऐसे उम्मेदवारों को राजकुमारी अपने साथ बिठाकर स्वादिष्ट भोजन परोसवा देती। भोजन के पश्चात एक थाली में बर्फ़ का टुकड़ा रखवा देती, उम्मेदवार के हाथ एक धागा देकर कहती कि धागे से बर्फ़ के टुकड़े को बांधे बिना, उसकी मदद से बर्फ़ के टुकड़े को ऊपर उठावे। उम्मेदवार को चाहिए कि धागे के छोर को बर्फ़ के टुकड़े के ऊपरी भाग पर चिपकाकर, इस प्रक्रिया में बर्फ़ के चूर्ण का उपयोग करके, टुकड़े को उठाना होगा! बर्फ़ का चूर्ण एक बर्तन में रखा जाता था।

जितने भी उम्मेदवार आये, वे सब इस परीक्षा में हार गये। स्नोह्वाइट ने वह काम करके प्रत्यक्ष दिखा दिया। इस स्पर्धा में हारे गये सभी राजकुमार शर्त के नियमानुसार राजमहल में बन्दी बनकर रह गये। राजा की मृत्यु के हुए एक वर्ष बीत चुका था। हिमदेश का मंत्री वृद्ध हो

ए. सी. सरकार, जादूगर

चुका था। वह चाहता था कि शीघ्र ही स्नोह्वाइट का विवाह संपन्न हो जाय!

हिमदेश के निकट एक छोटा-सा देश था जिसके राजकुमार जान को मंत्री बहुत चाहता था। जान सुंदर और गंभीर स्वभाव का था, साथ ही वह शिक्षित और वीर था। जान ने जब परीक्षा में भाग लेने की इच्छा प्रकट की, तब मंत्री ने उसे समझाया कि वह जल्दबाजी न करे। उसने सलाह दी कि परीक्षा में सफल होने के मौक़े का वह इंतज़ार करे।

कालांतर में मंत्री को मालूम हुआ कि स्नोह्वाइट अपनी परीक्षा में कैसे सफल होती है। मंत्री ने यह रहस्य जान को बताया और उसे परीक्षा में भाग लेने के लिए बुलवा भेजा।

एक दिन जान ने स्नोह्वाइट से मिलकर अपनी इच्छा ज़ाहिर की कि वह उसके साथ विवाह करना चाहता है। उसे भोजनालय में ले जाया गया। दावत के बाद बर्फ़ का टुकड़ा जान के सामने रख उसके हाथ एक धागा दिया गया।

इसके बाद स्नोह्वाइट ने समझाया—"राजकुमार, इस धागे की मदद से आप बर्फ़ के टुकड़े को ऊपर उठाइए।"

जान धागे को बर्फ़ के टुकड़े के नीचे ले जाकर उससे टुकड़े को बांधने को हुआ।

"राजकुमार, ऐसे नहीं, बर्फ़ के टुकड़े को धागे से बांधे बिना, धागे को बर्फ़ के टुकड़े के चारों तरफ़ फांदे की भांति डाले बिना उठाना होगा। धागे के छोर को बर्फ़ के टुकड़े पर चिपकाकर उठाना होगा, ज़रूरत पड़ने पर धागे को बर्फ़ के टुकड़े से चिपकाने के लिए वर्फ़ के चूर्ण का उपयोग किया जा सकता है।" राजकुमारी स्नोह्वाइट ने समझाया।

"क्या मैं बर्फ़ के चूर्ण का उपयोग कर सकता हूँ? तो आप ने यह बात पहले क्यों नहीं बताई? तब तो फिर मैं कोशिश करूँगा।" जान ने उत्तर दिया।

इसके बाद बर्फ़ के चूर्ण का पात्र उसके सामने सरका दिया गया। इस बीच उसने अपने दायें हाथ को अपनी गोद से निकालकर झट से बर्फ़ के चूर्ण में डुबो दिया और बर्फ़ के टुकड़े पर स्थित धागे के छोर को दबाया। इसके बाद थोड़ा और चूर्ण लेकर उस पर चिपका दिया।

"राजकुमारी, यदि मैं परीक्षा में विजयी हो जाऊँ तो अपने वचन का पालन करते हुए आप मुझे अपने पति के रूप में स्वीकार करेंगी न?" जान ने पूछा।

"अवश्य! क्यों नहीं? मैंने अपने मृत पिता की शपथ लेकर यह निर्णय किया है।" स्नोह्वाइट ने उत्तर दिया।

तब जान ने धागा पकड़कर बड़ी सावधानी से ऊपर उठाया, उसके साथ बर्फ़ का टुकड़ा भी ऊपर उठा। इस पर स्नोह्वाइट के गाल लाल हो गये। वह अपने चेहरे को हाथों से ढककर वहाँ से चली गई।

इसके बाद जान और स्नोह्वाइट का वैभवपूर्वक विवाह संपन्न हुआ। बन्दी सब रिहा हो गये, उन सबने विवाह में भाग लिया। तब जान का अभिनंदन करके अपने-अपने देश को चले गये।

विवाह के बाद स्नोह्वाइट ने अपने पति से एक दिन कहा—"आप जानते हैं कि मैंने अपने विवाह के लिए यह परीक्षा क्यों रखी है? तेज बुद्धि तथा समय की सूझवाले युवक के साथ में विवाह करना चाहती थी। ये दोनों चीजें आप में हैं।"

यह प्रशंसा जान को पसंद न आई। वास्तव में वह मंत्री की सूचना के अनुसार थोड़ा नमक अपनी पोशाकों में छिपाकर ले गया था। उसमें से थोड़ा नमक लेकर ऐसा अभिनय किया कि उसने अपने हाथ को बर्फ़ के चूर्ण में डुबो दिया है, तब उस नमक को धागे के छोर पर चिपका दिया जिससे धागे का छोर बर्फ़ के टुकड़े के साथ चिपक गया। तीन वर्ष बाद जान ने यह बात अपनी पत्नी पर प्रकट की। स्नोह्वाइट ने क्रोध का अभिनय करते हुए उसकी ओर प्रेम भरी दृष्टि डाली।

सबसे ख़राब धंधा

पुराने जमाने की बात है। वैशाली नगर में सोमगुप्त नामक एक व्यापारी था। व्यापार के द्वारा सोमगुप्त पर्याप्त मात्रा में धनार्जन भी कर लेता था, मगर सोमगुप्त उस छोटे से व्यापार से संतुष्ट न था। वह बहुत जल्द एक करोड़पति बन जाना चाहता था। इसके वास्ते उसने एक दूसरा पेशा अपनाने की योजना बनाने का संकल्प किया। पर वह यह निश्चय न कर पाया कि कौन सा पेशा सबसे ज़्यादा लाभदायक होगा? उन्हीं दिनों में एक लखपति के घर में चोरों ने डाका डाला और दो-चार लाख क़ीमती सोना-चाँदी व नक़द भी चुरा ले गये। सोमगुप्त को लगा कि ऐसी एक बड़ी चोरी ज़िंदगी में सिर्फ़ एक दफ़ा कर ले तो शेष सारी जिंदगी आराम से काटी जा सकती है। इस पेशे में एक पैसे की पूंजी लगाने की ज़रूरत न पड़ेगी।

इस विचार के आते ही सोमगुप्त ने चोरों के साथ परिचय तथा उस पेशे के सारे रहस्यों की जानकारी प्राप्त करनी चाही। उसने बड़े प्रयास के बाद यह जान लिया कि रात के वक़्त चोरों का दल कहाँ पर इकट्ठा हो जाता है। सोमगुप्त संध्या के समय उजड़े मंदिर के पास पहुँचा और मंदिर के एक चबूतरे पर लेटकर सोने का अभिनय करते चोरों का वार्तालाप सुनता रहा। उसने अनुभव किया कि चोरी करने के लिए अत्यंत साहस और दूरदृष्टि की आवश्यकता है।

प्रति दिन सोमगुप्त को चबूतरे पर लेटकर सोते चोरों ने देखा और सोचा कि यह कोई अनाथ होगा, कभी ज़रूरत के वक़्त इसकी मदद भी ली जा सकती है।

एक दिन आधी रात को दो चोर दो बहंगियाँ उठाकर ले आये। उनमें एक बड़ा

सुनील श्रीवास्तव

था और दूसरा छोटा था। छोटे चोर ने सोमगुप्त को जगाकर समझाया—"सुनो भाई, आज हमारा एक साथी नहीं आया है, तुम हमारे साथ चलोगे तो चोरी के माल में से तुम्हें भी थोड़ा-बहुत हिस्सा देंगे। तुम्हें डरने की ज़रूरत नहीं कि हमारा काम तुम न कर सकोगे। तुम हमारे कहे अनुसार करते जाओ, बस, तुम्हें बचाने की जिम्मेदारी हमारी है।"

सोमगुप्त ऐसे ही मौक़े के इंतज़ार में था, इसलिए उसने झट से मान लिया।

चोरों ने सोमगुप्त का वेष बदल डाला, उसका कुर्ता खोल दिया, उसके सिर पर पगड़ी बांध दी। चेहरे पर काला रंग पोत दिया, छोटी-सी दाढ़ी चिपका दी। धोती सिर्फ़ घुटने तक पहना दी। हाथ में एक लाठी थमा दी, सिर पर एक बोरा रखा, हाथ में सात-आठ गुड़ के टुकड़े देकर कहा—"अब चलो हमारे साथ।"

सोमगुप्त जानता न था कि चोरी करने के लिए ऐसी पूर्व तैयारी भी करनी होती है। चोरों ने उसे एक किसान के रूप में बदल डाला था। उस रूप में उसकी पत्नी भी उसे पहचान न सकती थी।

यों सोचते सोमगुप्त रास्ते पर बढ़ा जा रहा था। रास्ते में एक कुत्ता लेटा हुआ था। उस पर सोमगुप्त ने अपना पैर रखा। फिर क्या था, वह ज़ोर-शोर से भूंकने लगा। सोमगुप्त घबरा गया, उसने चीख़कर हाथ के गुड़ के टुकड़े गिरा दिये। कुत्ता भूंकना बंद करके गुड़ के टुकड़ों को चाटने लगा।

बड़े चोर ने सोमगुप्त के हाथ और थोड़े गुड़ के टुकड़े देकर समझाया—"दोस्त! हम लोग चोरी करने जा रहे हैं, शादी की दावत उड़ाने के लिए नहीं; तुम्हें और सावधान रहना होगा।"

छोटे चोर ने कहा—"सुनो भाई, कुत्ते का भूंकना और तुरंत मुंह बंद करना सुनकर कोतवाल समझ जाएगा कि कहीं दाल में कुछ काला है। वह ज़रूर इस

ओर आ धमकेगा । नाना प्रकार के सवाल पूछेगा । तुम अपना मुंह मत खोलो । उसके सारे सवालों का जवाब मैं खुद दूंगा ।"

छोटे चोर की कल्पना के मुताबिक़ कोत्वाल घोड़े पर उधर से आ निकला । उसने गरजकर पूछा–"तुम लोग कौन हो? यह नहीं जानते कि आधी रात के वक़्त गलियों में घूमना मना है। सच कहो, इतनी रात गये तुम लोग किस काम से निकले हो?"

कोत्वाल की कड़कती आवाज़ सुनने पर सोमगुप्त के कलेजे में धड़कन होने लगी ।

"छी छी: प्रत्येक पल प्राणों को हथेली में रखकर जीनेवाला यह कैसा पेशा है? चाहे इस पेशे में भले ही ज़्यादा मुनाफ़ा क्यों न हो? इसके पूर्व इस कोत्वाल को क्या, इससे भी बड़े अधिकारी को देख मैं कभी डरा भी था?" सोमगुप्त ने मन में सोचा ।

छोटे चोर ने कोत्वाल से कहा–"हम रामापुर के निवासी हैं सरकार! गुड़ बेचने के ख़्याल से बहंगियों में लेके आये, इस अंधेरे में हमें सराय के रास्ते का पता न चला । इसीलिए भटक रहे हैं, आप मेहर्बानी करके रास्ता बताकर पुण्य लूटिये ।"

"सराय का रास्ता बता दूंगा, पहले तुम लोग अपने नाम बतला दो। यह
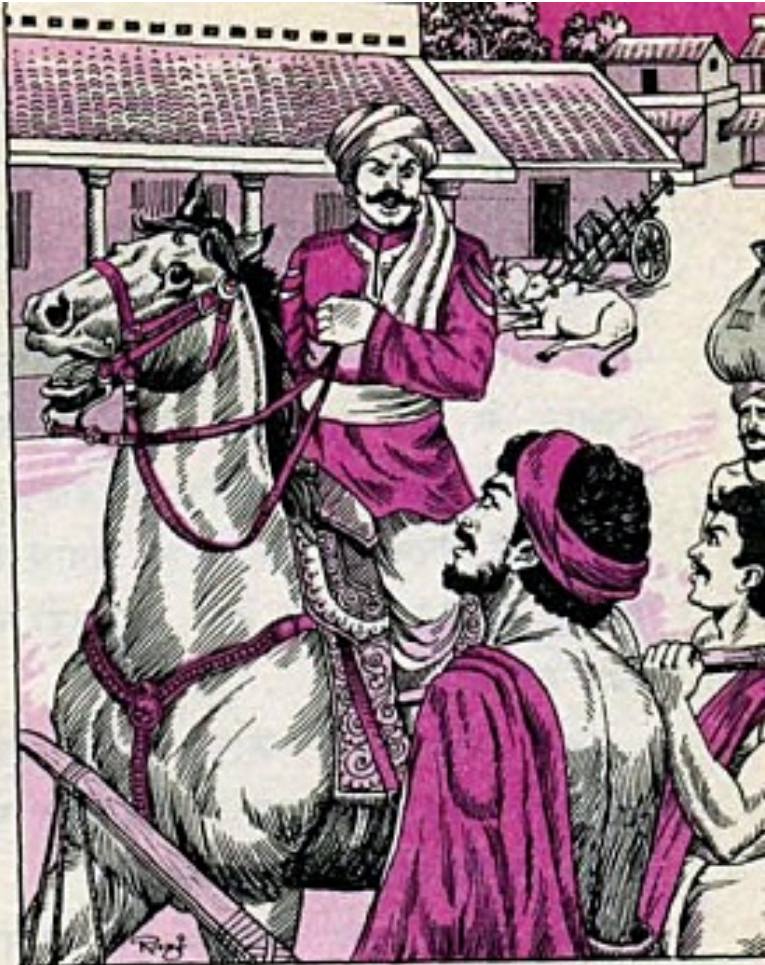
तोंदवाला कौन है? यह तो मेहनत करनेवाले जैसे नहीं लगता ।" कोत्वाल ने व्यापारी की ओर देखते हुए पूछा । व्यापारी को लगा कि उसके प्राण उड़े जा रहे हैं ।

"मेरा नाम रंगदास है, ये मेरे भाई भीमदास हैं और ये व्यापारी मंगाराम हैं, बिना मेहनत किये मुनाफ़ा पाकर तोंद बढ़ा ली है।" छोटे चोर ने जवाब दिया ।

कोत्वाल हँस पड़ा । सराय का रास्ता दिखाकर बोला–"एक घड़ी के अंदर मैं सराय में आ जाता हूँ, मैं देखूंगा, तुम तीनों वहाँ पर हो कि नहीं । ख़बरदार! जाओ ।" तीनों के दिल हल्के हुए, तब खुशी-खुशी चोरी करने चल पड़े ।

व्यापारी के मन में अब तक चोर के पेशा के प्रति पूर्ण रूप से घृणा पैदा हो गई। पल-पल पर डरना पड़ता है, क़दम-क़दम पर झूठ बोलना पड़ता है। चोरी करने के पहले अगर यह हालत है तो इस पेशे को अपनाने के बाद पूर्ण रूप से मानसिक शांति जाती रहेगी। इस पेशे में बिलकुल प्रवेश नहीं करना है, किसी भी उपाय से यहाँ से बचकर भागना है। व्यापारी ने अपने मन में सोचा।

इसके बाद तीनों जाकर एक बड़े मकान के सामने जा रुके। उसी घर में वे लोग डाका डालना चाहते थे।

"मैं ताला तोड़ दूंगा। हम दोनों अंदर जाकर माल लेते आयेंगे, तब तक ये बुजुर्ग बाहर पहरा देते रहेंगे।" यों आपस में सलाह करके चोरों ने ताला तोड़कर अंदर प्रवेश किया।

तभी व्यापारी वहाँ से चलकर अपने घर पहुँचा। वह गली का नुक्कड़ पारकर ही रहा था कि तभी उसने देखा, राजभट एक चोर को बन्दी बनाये कोड़े मारते ले जा रहे हैं। चोर के पीछे उसकी पत्नी और बच्चे रोते-चिल्लाते जा रहे हैं। इसे देख ग्रामवासियों में से किसी ने भी उनके प्रति सहानुभूति न दिखाई।

व्यापारी के मन में उस चोर के प्रति अगाध सहानुभूति पैदा हुई। उसने सोचा– 'न मालूम यह कैसा पेशा है! चोर हाथ में आ जाता है तो उसे चाहे जो भी दण्ड दिया जाय, समाज उसका समर्थन करता है। यदि मैं भी पकड़ा जाऊँ तो मेरी भी हालत यही होगी न?'

इसके बाद पिछवाड़े के रास्ते से उसने अपने घर में प्रवेश किया, अपना वेश बदल लिया, हाथ-मुँह धोकर शांत मन से अपने घर के चबूतरे पर जा लेटा।

सवेरा होते ही व्यापारी की पत्नी ने उसे जगाया और बताया कि आधी रात के बाद दो चोरों के भागते देख कोतवाल ने उनका पीछा किया और तलवार से उन्हें मार डाला है।
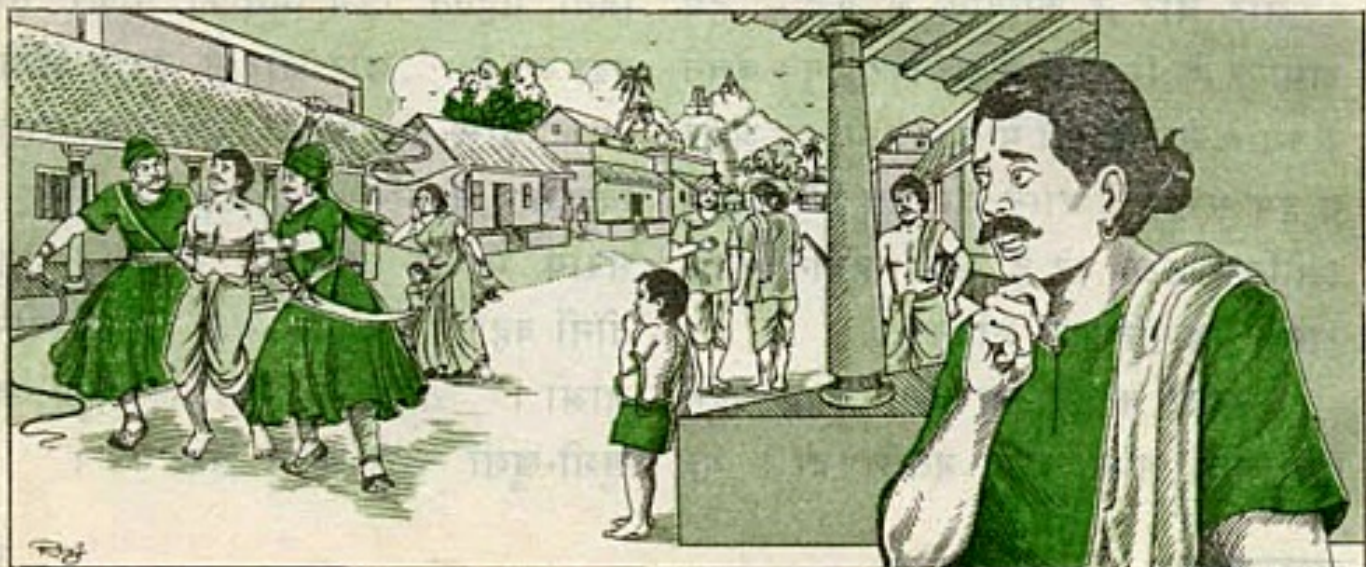
लाभ और नुकसान

धनगुप्त नामक व्यापारी के रामगुप्त और श्यामगुप्त नामक दो पुत्र थे। धनगुप्त ने व्यापार में लाखों रुपये कमाये, पर अधेड़ उम्र में प्रवेश करते-करते उसका मन खेतीबारी की ओर आकृष्ट हुआ। उसने सौ एकड़ ज़मीन ख़रीद ली। खेती में भी उसे नफ़ा होने लगा, बूढ़े होने पर उसने अपने पुत्रों में से एक को व्यापार में तथा दूसरे को खेतीबारी में लगाना चाहा, पर किसको कौन काम सौंपे! यही सवाल था।

धनगुप्त ने दोनों पुत्रों के हाथ एक-एक हज़ार रजत मुद्राएँ देकर समझाया–"इस धन से तुम दोनों व्यापार का माल ख़रीदकर अपनी पसंद की दिशा में चले जाओ और मुनाफ़े में बेच आओ।"

बड़े पुत्र ने खाद्य पदार्थ सस्ते में ख़रीदा और जहाँ महँगा था, उस प्रदेश में जाकर बेचा। प्रसन्नतापूर्वक लौटकर अपनी पूंजी के बराबर का फ़ायदा कमाने की बात कहते अपने पिता के हाथ दो हज़ार मुद्राएँ रखीं।

दूसरा निराशापूर्वक लौट आया और बोला–"पिताजी, मेरा अनुभव पर्याप्त न था, इसलिए मैं एक हज़ार मुद्राओं को सिर्फ़ चार हज़ार ही बना पाया।"

इस पर धनगुप्त ने बड़े पुत्र को खेतीबारी तथा छोटे को व्यापार की जिम्मेदारी सौंप दी।
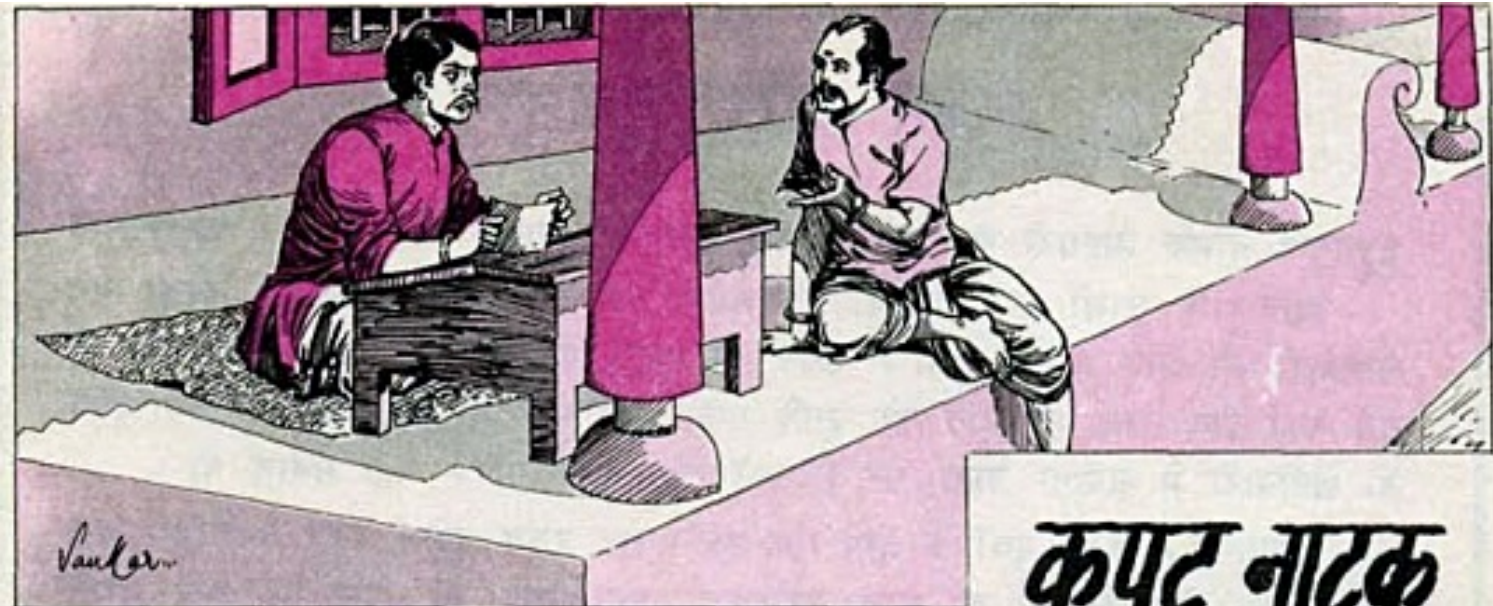
कपट नाटक

जगन्नाथ गांव का सबसे बड़ा धनी था, वह कभी किसी का कोई उपकार न करता था। जगन्नाथ का पुत्र विट्ठल अपने पिता के विरुद्ध स्वभाव का था।

जगन्नाथ का पड़ोसी रत्नाकर निर्धन था। पर रत्नाकर ना क़ाबिल आदमी न था।

जगन्नाथ और रत्नाकर के घरों के बीच इमली का बड़ा पेड़ था। वह रत्नाकर के घर की ओर झुका हुआ था। रत्नाकर का डर था कि कभी किसी आंधी और तूफान के वक़्त वह पेड़ उसके घर पर गिर सकता है। मगर यह बात स्पष्ट कह दे तो जगन्नाथ नाराज़ हो सकता है; इसलिए उसे काटने का कोई उपाय ढूंढ़ना होगा।

रत्नाकर यही बात सोचता रहा। एक दिन जगन्नाथ अपने घर के चबूतरे पर बैठकर हिसाब-क़िताब देख रहा था, तब रत्नाकर ने वहां जाकर कहा—"आप की कृपा से मुझे इमली खरीदने की झंझट से मुक्ति मिल गई है। रोज आधा मन इमली के फल मिल जाते हैं।"

"रत्नाकर! क्या तुम मेरे इमली के फल लेते हो? तुम्हें लज्चा नहीं आती?" जगन्नाथ ने कड़क कर कहा।

"मेरे अहाते में जो फल गिर जाते हैं, उन्हें लेने में चोरी कैसे हो सकती है?" रत्नाकर ने उल्टा सवाल किया। फिर क्या था, जगन्नाथ ने तुरंत इमली का पेड़ कटवा दिया, जिससे रत्नाकर की समस्या हल हो गई।

जगन्नाथ एक कुत्ते को पाल रहा था। वह जो भी आदमी दिखाई देता, उसका पीछा करता था। एक दिन उस कुत्ते ने रत्नाकर की लड़की का पीछा किया।

आदित्य वर्मा

इसलिए वह सोचने लगा कि कुत्ते का पिंड कैसे छुड़ाया जाय।

एक दिन रत्नाकर ने वर्तालाप के संदर्भ में जगन्नाथ से कहा–"आप के कारण मेरा बड़ा उपकार हो रहा है।"

जगन्नाथ ने पूछा–"कैसा उपकार है?"

"कल रात को मेरे घर में चोर सेंध लगाने लगे, तब आप का कुत्ता भूंक उठा। मैं जाग पड़ा। मुझे देख चोर भाग गये।" रत्नाकर ने समझाया।

ये बातें सुनने पर जगन्नाथ का क्रोध भड़क उठा। क्या वह कुत्ते को खरीदकर इसलिए पाल रहा है कि वह रत्नाकर के घर का पहरा दे? यों सोचकर उसने उसी दिन कुत्ते को बेंच डाला।

जगन्नाथ के पुत्र विट्ठल को मालूम हुआ कि रत्नाकर अपनी पुत्री गंगाबाई की शादी का रिश्ता क़ायम करने जा रहा है। इस पर विट्ठल ने गंगाबाई के साथ शादी करने की इच्छा प्रकट की।

रत्नाकर ने कहा–"बेटा, इस रिश्ते को तुम्हारे पिता स्वीकार नहीं करेंगे और न मैं भारी रक़म दहेज दे सकता हूँ।"

"मैं अपने पिता से लड़कर भी गंगाबाई के साथ शादी करूँगा।" विट्ठल ने कहा।

"तब तो तुम जल्दबाजी न करो, कोई न कोई उपाय सोच लेंगे।" रत्नाकर ने सुझाया।

एक दिन रत्नाकर अपने आंगन में तोरण बांध रहा था, तब जगन्नाथ ने

पूछा–"रत्नाकर! कोई शुभ कार्य तो नहीं कर रहे हो?"

"मैं विशालपुर में तीर्थाटन करने गया था। वहाँ के जमीन्दार के छोटे भाई ने मेरी पुत्री गंगा को देखा और शादी करने की इच्छा प्रकट की। आज वे लोग लड़की देखने आनेवाले हैं। मैं आप से यह बात निवेदन करना चाहता था, आप ही आ गये।" रत्नाकर ने कहा।

दुपहर को घोड़ों तथा पालकियों पर वर पक्ष के लोग आये। तरह-तरह के उपहार भी ले आये। ब्राह्मणों को भारी दक्षिणाएँ दीं। लड़की को देखने के बाद यह बताकर चले गये कि हम अपनी सम्मति शीघ्र कहला भेजेंगे।

जगन्नाथ ने अपनी आँखों से वह सारा ठाठ देखा था, उसका दिल भारी हो गया। यदि यह संबंध पक्का हो गया तो रत्नाकर उसकी परवाह न करेगा, जब गंगाबाई जमीन्दार के परिवार की बहू बन सकती है तो उसके घर की क्यों नहीं?

यों जगन्नाथ बड़ी देर तक सोचता रहा। उसके दिल में भारी हलचल मच गई। आखिर रत्नाकर के घर आकर बोला–"रत्नाकर, सुनो! हम दोनों बचपन के दोस्त हैं। हमारे लड़के के साथ तुम्हारी लड़की का विवाह हो गया तो हम दोनों की दोस्ती और पक्की हो जाएगी।"

"जगन्नाथ! मैं तो गरीब ठहरा। आप की बराबरी मैं नहीं कर सकता। इसलिए आप फिर से ठण्डे दिल से सोच लीजिए।" रत्नाकर ने समझाया।

जगन्नाथ का मुख्य उद्देश्य जमीन्दारवाले रिश्ते को तोड़ने का था। इसलिए उसने रत्नाकर को समझाया कि वह सारा खर्च उठाकर गंगा को अपनी बहू बना लेगा।

विट्ठल ने अपने पिता को चकमा देकर एक हजार रुपये खर्च करके झूठे जमीन्दारी-रिश्ते का जो कपट नाटक रचा था, उसे देख ईर्ष्यालू जगन्नाथ धोखा खा गया। इसके बाद विट्ठल और गंगाबाई का विवाह ठाठ से संपन्न हुआ।

अभिनेता

शिवनारायण को जवानी में जब परिवार का बोझ अपने ऊपर लेना था, तब वह पाठशाला में पढ़ता था। पढ़ाई को भी तिलांजली देकर वह नाटक खेलने की लत का शिकार हो गया, कभी कभी कई दिनों तक रातों मे घर लौटता था।

प्रारंभ में यह बात शिवनारायण के माता-पिता को मालूम न थी, मगर एक दिन अध्यापक ने घर आकर शिवनारायण के पिता से शिकायत की–"महाशय, आप के लड़के ने पाठशाला में आना बंद कर दिया है। वह सदा नाटकों का अभ्यास करने जाया करता है। अगर आप उस पर नियंत्रण न रखेंगे तो बाद को पछताने से कोई फ़ायदा न होगा।"

उसी दिन संध्या को शिवनारायण घर लौटा, खाना खाकर बाहर जाने को हुआ, तब उसके पिता ने कड़ककर पूछा–"अबे, बताओ, फिर कहाँ जा रहे हो?"

"बाबूजी! मैं पढ़ने के लिए जा रहा हूँ।" शिवनारायण झूठ बोल गया।

शिवनारायण के मुँह से यह सफेद झूठ के निकलते देख उसके पिता से रहा न गया। उसने बेंत लेकर शिवनारायण को खूब पीटा और गरजकर कहा–"आइंदा तुम नाटकों का अभ्यास करने जाओगे तो तुम्हारी चमड़ी उधेड़ दूंगा। नाटकों से आखिर तुम्हें क्या हासिल होनेवाला है?" यों धमकाकर उसे पिछवाड़े में स्थित एक झोंपड़ी में ढकेल दिया और बाहर ताला लगाकर बोला–"तुम दस दिन इसी झोंपड़ी में पड़े रह जाओ।"

शिवनारायण रोते हुए झोंपड़ी में सो गया। आधी रात के वक़्त उसकी नींद टूट गई। उसने देखा, सामने तीन आकृतियाँ दिखाई दीं। उन्हें देखते ही शिवनारायण का शरीर कांप उठा।

शीला गुजराल

"तुम डरो मत! हम लोग अगली अमावास्या के दिन अपने नेता के समक्ष एक नाटक का प्रदर्शन करने जा रहे हैं। अभ्यास करने के लिए सिर्फ़ एक सप्ताह रह गया है। उस नाटक में मानव का एक पात्र है। उसका अभिनय तुम्हें करना होगा। क्यों राजी हो?" पिशाचों ने पूछा।

पिशाचों ने आखिर शिवनारायण को मनवा लिया। बिना दर्वाजा खोले वे शिवनारायण को अपने साथ ले गये। पिशाचों ने उसे समझाया कि नाटक का अभ्यास केवल रातों में ही होगा, सवेरा होने तक उसे फिर से झोंपड़ी में पहुँचा दिया जाएगा। इस तरह उसके रहस्य को गुप्त रखा जाएगा।

पिशाच जो नाटक खेलने जा रहे थे, उस नाटक में तीन पिशाच नाना प्रकार की यातनाएँ झेलकर एक थैली भर सोना कमाते हैं, पर उसे बांटने में तीनों के बीच झगड़ा पैदा होता है। आखिर वे एक मानव से निवेदन करते हैं कि वह तीनों में बराबर सोना बांटकर दे। पर वह मानव उन पिशाचों के प्रति विश्वासघात करके सोना हड़प लेता है। उसी विश्वासघाती का अभिनय शिवनारायण को करना पड़ा।

नाटक का प्रारंभिक भाग पिशाच कैसे सोना प्राप्त करते हैं, इसका अभिनय होता है। इसके बाद नाटक के अभ्यास के समय सचमुच पिशाचों ने थैली भर सोना

लाकर शिवनारायण के हाथ दिया। शिवनारायण ने वास्तव में अनोखा अभिनय किया। पिशाचों ने उसके अभिनय की बड़ी तारीफ़ की।

सवेरा होने के पहले पिशाच शिवनारायण को झोंपड़ी में पहुँचाकर चले गये। मगर सोने की थैली तब तक शिवनारायण के कंधे पर ही लटक रही थी। उसने सोचा कि उसकी मेहनत का बढ़िया फल मिल गया है। उसने सोने की थैली पुआल के नीचे छिपा दी। पर उसने घर में पिशाचों की बात बिलकुल नहीं बताई। क्यों कि अगर वह बता देता तो न केवल घर के लोग डर जाते, बल्कि उसे नाटक का अभ्यास करने जाने नहीं देते।

शिवनारायण का पिता रोज संध्या के होते ही उसे झोंपड़ी में बंदकर देता। रोज रात को पिशाच आते, नाटक का अभ्यास करने के लिए उसे ले जाकर थैली भर सोना दे देते थे। इस प्रकार सात दिन वह सात थैलियाँ सोना ले आया।

अमावास्या की रात्रि के दिन पिशाचों ने नाटक का प्रदर्शन किया, पिशाचों के नेता ने नाटक की बड़ी तारीफ़ की। पिशाचों ने शिवनारायण की खूब प्रशंसा की और उसे झोंपड़ी में पहुँचाकर यह कहकर चले गये–"सुनो भाई, अब आइंदा हम तुम्हें ले जाने न आयेंगे।"

शिवनारायण को अब पिशाचों से पिंड छूट गया था। उसने अपने माता-पिता

को सात थैलियों का सोना दिखाकर कहा–"आप ने कहा था कि नाटकों का अभ्यास करने से क्या हाथ लगनेवाला है? अपनी आँखों से देख तो लीजिए कि मैंने नाटकों का प्रदर्शन करके कितना सोना कमाया है। अब आप के कहे मुताबिक़ मैं कभी नाटक खेलने नहीं जाऊँगा। यह सोना बेचकर शहर में व्यापार शुरू कर दूँ तो हम लोग ठाठ से अपने दिन बिता सकते हैं। चाहे ऊँची से ऊँची शिक्षा भी प्राप्त करे तो क्या हम इतना सारा सोना कमा सकते थे?"

अपने पुत्र की इस क़ाबिलियत पर उसके माता-पिता बहुत ही प्रसन्न हुए। दूसरे दिन शहर जाने के लिए सारी तैयारियाँ कीं।

किंतु आश्चर्य की बात थी कि उस दिन रात को पिशाचों ने आकर शिवनारायण को जगाया। शिवनारायण ने खीझकर पूछा–"तुम लोगों ने तो कहा था कि आइंदा लौटकर कभी नहीं आयेंगे! क्या फिर कोई नाटक खेलना है?"

"अबे, तुम नाटक में ही नहीं, बल्कि निजी जीवन में भी विश्वासघाती हो। तुमने पवित्र नाटक-कला के प्रति द्रोह किया है! हम अपने जीवनकाल में प्रसिद्ध अभिनेता थे। हमने यह सोचकर तुम्हें बहुत सारा सोना दिया था कि तुम सचमुच एक उँचे कलाकार हो और हमारा प्रोत्साहन पाकर तुम नाटक-कला का उद्धार करोगे, एक बहुत बड़े नाटक समाज की स्थापना करके उसके द्वारा अज्ञात में रहनेवाले उत्तम अभिनेताओं को आश्रय देकर अपना शेष जीवन कला की आराधना में लगाओगे, मगर तुमने इसे अपने स्वार्थ के लिए उपयोग करना चाहा। इसलिए तुम इस सोने को ले जाने की योग्यता नहीं रखते। हमारी दृष्टि में सचमुच इसके योग्य व्यक्ति जब दिखाई देगा तब हम उसी को यह सोना देंगे।" यों कहकर पिशाच सब सोने की थैली लेकर गायब हो गये।

देवी का प्रकोप

एक पहाड़ी प्रदेश में यादवपुर नामक एक गाँव में केवल यादव ही बस रहे थे। वे लोग पहाड़ की तलहटी में स्थित गाँवों में दूध, दही, घी तथा भेड़ों के ऊन से कंबल बुनकर बेच देते। इस प्रकार वे अपनी ज़िंदगी बिता देते थे।

यादवपुर में देवी का एक मंदिर था। एक दिन उस मंदिर में एक ओझा आया। यादव लोग पहाड़ से उतरकर जाते हुए देवी को प्रणाम करने मंदिर में गये। उन्हें देख ओझा चिल्ला उठा–"मुझे बलि चाहिए! वरना तुम सबको निगल डालूंगा।" इसके बाद वह भूत के आवेश का अभिनय करते झूमने लगा।

भोले यादवों ने अपने घड़े व बर्तन सिर से उतारे, नीम की टहनियों से झलते हुए बोले–"शांत हो जाओ, देवी! हमारे बाल-बच्चों की रक्षा करो।"

ओझा का आवेश उतर गया। यादवों ने उससे निवेदन किया कि वह पहाड़ पर ही रह जावे, उसके लिए घर बनवाकर दिया जाएगा। ओझा ने मान लिया, उस दिन से उसका सारा खर्च यादव ही उठाने लगे, वह आराम से अपने दिन काटने लगा।

एक दिन यादवों के मुखिये का लड़का बेहोश हो गया। मुखिये ने ओझा के पास जाकर विनती की कि लड़के की रक्षा करे।

"मुझे बलि चाहिए! भेड़ा चाहिए।" यों चिल्लाते ओझा झूम गया।

मुखिये ने लाचार होकर ओझा को भेड़ा दिया।

ओझा ने यादवों के मुखिये के पुत्र को भभूत दिया। थोड़ी देर में उसकी बेहोशी जाती रही।

दमयंती गर्ग

उस समय से यादव लोग ओझा को देवी के भक्त के रूप में ही नहीं बल्कि वैद्य के रूप में भी उसका आदर करने लगे।

इसके बाद यादवों का मुखिया थोड़े और यादवों के साथ घी बेचने हाट में गया। उसने देखा कि उसके द्वारा ओझा को दिये गये भेड़ को कोई खरीदकर ले जा रहा है। फिर क्या था, ओझा के धोखे का पता लग गया।

लेकिन यदि वह ओझा को धूर्त और दगाबाज बतला दे तो कोई यादव यक़ीन नहीं करेंगे। उल्टे उसी को ही नास्तिक बतायेंगे। इसलिए धोखे को धोखे से ही जीतना है।

यों विचार करके यादवों का मुखिया अपने गाँव को लौट आया। मंदिर के निकट पहुँचते ही झूमते हुए बोला—"अबे, ओझा ने अपवित्र काम किया है, मैं इसे सहन नहीं कर सकती। इसलिए मैं ओझा को छोड़कर जा रही हूँ।"

यादवों ने उसे गुग्गिल का धुआँ सुंघवाया, नीम की टहनियों से झलने लगे। बड़ी देर बाद मुखिया शांत हुआ।

उस दिन रात को ओझा जब अपना बोरी-बिस्तर बांधने लगा तो उसके पुत्र ने पूछा—"पिताजी, हम क्यों यहाँ से चले जावे? यहाँ पर तो हमारे दिन आराम से कट रहे हैं।"

"हमारे धोखे को मुखिया समझ गया है। इसीलिए उसने भी देवी के प्रवेश करने का अभिनय करके मुझ पर निंदारोप किया। अगर मैं उसमें देवी के प्रवेश की बात विश्वास न करूं तो गाँववाले मेरी बातों पर कैसे विश्वास करेंगे? इसलिए हमें यहाँ से जाना ही होगा।" ओझा ने अपने पुत्र से कहा।

ओझा के चले जाने के बाद फिर कभी भी यादवों के मुखिये के भीतर देवी ने प्रवेश नहीं किया।
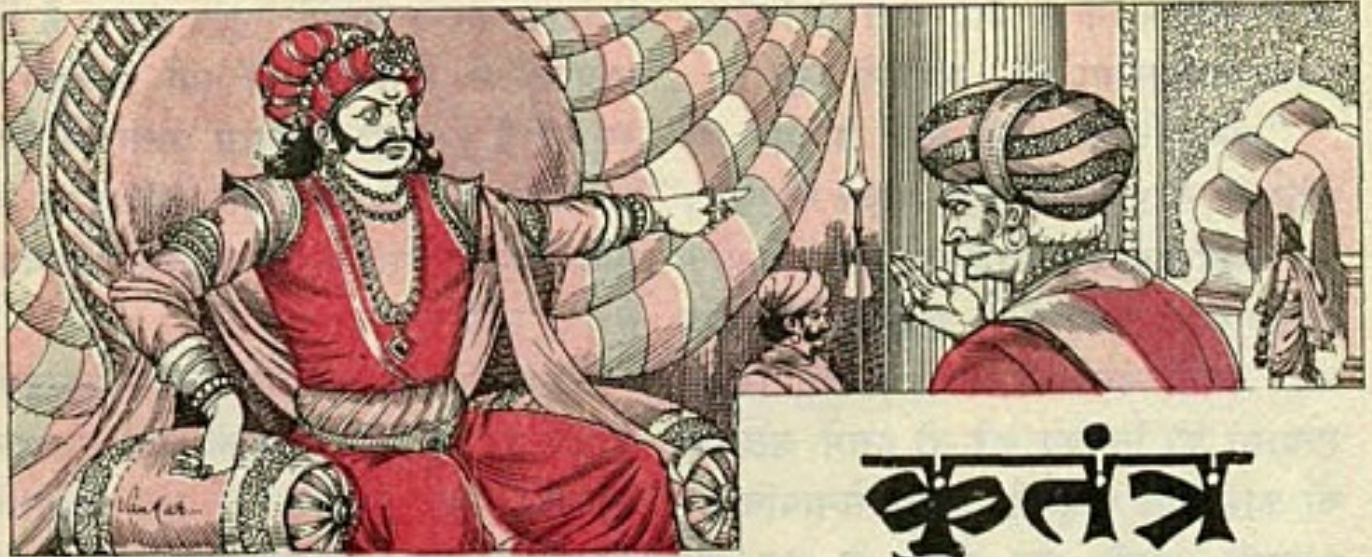
कुतंत्र

विजयपुर का राजा जयदेव साधू-सन्यासियों के प्रति अपार श्रद्धा व भक्ति रखता था। एक दिन राज दरबार में एक सन्यासी आया, राजा ने बड़े ही आदर के साथ सन्यासी का स्वागत किया।

सन्यासी ने कहा–" राजन, मैं तुम्हारे तथा तुम्हारी प्रजा के कुशल-क्षेम की कामना से यहाँ पर आया हूँ। यदि तुम सुखी रहना चाहते हो तो तुम्हें शत्रुओं का भय नहीं होना चाहिए। इसी के वास्ते मैं तुम्हारे सेनापति को अपनी मंत्र-शक्ति के बल पर अजेय बनाना चाहता हूँ।"

"साधू महाराज! आप की आज्ञा सिर आँखों पर है।" राजा ने उत्तर दिया।

उसी वक़्त मंत्री ने टोकते हुए कहा–"महाराज! आप मुझे क्षमा करें। संयासी की बातों में अपस्वर ध्वनित होता है।" जयदेव ने क्रोध में आकर कहा–"महा मंत्री, आप नाहक़ असंदर्भ की बातें न करें।" फिर क्या था, सन्यासी झट से अपने आसन से उठ खड़ा हुआ और राजदरबार से बाहर चला गया। राजा ने मंत्री को डांटते हुए कहा–"आप इस पल से मेरे महा मंत्री नहीं हैं। मैं आप को फांसी के तख़्ते पर चढ़वा दूँगा।"

महा मंत्री ने कहा–"महाराज, मरने के पहले मेरी आप से केवल यही प्रार्थना है कि आप सन्यासी की परीक्षा लेकर सचाई का पता लगा लीजिए।"

राजा को लगा कि मंत्री के मन में कोई ऐसा सत्य छिपा हुआ है जिससे राजा अपरिचित है। यों सोचकर पूछा–"आप के इस संदेह का कारण क्या है?"

"महाराज, मुझे गुप्तचरों के द्वारा पता चला है कि हमारे सेनापति के मन में कुबुद्धि ने घर कर लिया है। मैं अपने संदेह

अरुण गोस्वामी

की निवृत्ति करने के बाद आप से निवेदन करना चाहता था।" मंत्री ने कहा।

"सन्यासी के प्रति आप के मन में संदेह का कारण क्या है?" राजा ने पूछा।

"महाराज, आप साधू-सन्यासियों के प्रति अमित श्रद्धा रखते हैं। इसलिए सेनापति अगर अपने स्वार्थ की सिद्धि के हेतु किसी सन्यासी को नियुक्त करे तो इसमें आश्चर्य की कोई बात न होगी। अगर सेनापति को सन्यासी अपनी मंत्र शक्ति के बल पर अजेय बना सकते हैं तो वे आप ही को बना सकते थे न? सेना को मालूम हो जाय कि सेनापति अजेय है तब वह जो भी आदेश जारी करेगा, सेना आँख मूंदकर अमल करेगी।" मंत्री ने समझाया।

"अगर आप के कथनानुसार सन्यासी द्रोही हैं तो उन्हें शक्तियाँ कहाँ से प्राप्त होंगी? वे सेनापति को कैसे अजेय बना सकते हैं?" राजा ने पूछा।

"सन्यासी में शक्तियों का रहना महत्व की बात नहीं है। समाज का इस बात पर विश्वास करना अत्यंत महत्व रखता है कि सन्यासी ने सेनापति को सर्व शक्तिमान बनाया है। ऐसा विश्वास जनता में पैदा हो जाने के बाद सेनापति का राजा के प्रति विश्वासघात करना मिनटों की बात है।" मंत्री ने कहा।

राजा भिखारी का वेष धरकर सन्यासी के डेरे पर पहुँचा। खिड़की में से राजा ने झांककर देखा, सन्यासी के पास सेनापति बैठा हुआ था। उनका वार्तालाप सुनने पर राजा को स्पष्ट मालूम हुआ कि दोनों के बीच कुतंत्र चल रहा है।

राजा जयदेव तुरंत राजमहल को लौट आया। राजभटों को भेजकर सन्यासी तथा सेनापति को बन्दी बनवाया। सेनापति के कुतंत्र और राजद्रोह की सुनवाई हुई। फिर भी राजा ने सेनापति को दण्ड न दिया, जनता के विश्वास का संपादन करने के लिए सेनापति के साथ द्वन्द्व युद्ध करके उसे मार डाला। सन्यासी को देश निकाले की सजा सुनाई।

सही सबक़

गणपतवर्मा की पत्नी का नाम सरोजाबाई था। गणपत की मां दुर्गाबाई स्वभाव से बड़ी झगडालू थी। उसे जब कभी कुछ नहीं सूझता तब वह अपनी बहू पर बरस पड़ती, और उसे नाहक़ सताती थी।

एक दिन रात को दुर्गाबाई ने कोई सपना देखा। सपने में सरोजाबाई ने दुर्गाबाई की निंदा की और गुस्से में आकर उसने अपनी सास पर हाथ भी चलाया। इस पर दुर्गाबाई को बड़ी चोट लग गई। खून भी निकल आया।

दुर्गाबाई झट से उठ बैठी। कहा जाता है कि अंतिम प्रहर में होनेवाले सपने अकसर सच हुआ करते हैं। दुर्गाबाई नींद से जागते ही बहू पर हमला कर बैठी। गाली-गलौज के साथ वह डांटने लगी–"अरी डायन, तुम रात को सपने में मुझे पीटती हो। तुम्हारी कैसी हिम्मत? देखो, अभी मैं तुम्हारी मरम्मत कर देती हूँ।" इन शब्दों के साथ मुट्ठी बांध कर उसके सिर पर दे मारा।

सरोजा बाई ने कोई प्रतिवाद नहीं किया। गणपत यह सारा दृश्य देख ही रहा था। अकसर दुर्गाबाई का सपने देखना और उस बहाने बहू को तंग करना बढ़ता ही गया। गणपत ने कई बार अपनी मां को घर से निकालना चाहा, पर विवेक ने उसे ऐसा करने न दिया। उसने सोचा कि अगर पुत्र ही उसे घर से निकाल दे तो उसकी देखभाल कौन करेगा? और लोग क्या सोचेंगे? समाज उस पर थूकेगा। इसलिए उसने किसी युक्ति के द्वारा अच्छा सबक़ सिखाना चाहा।

गणपत ने एक दिन नींद से जागते ही अपनी मां के पास पहुंच कर नमस्कार किया और थोड़े रुपये उसके हाथ पर

मनोहर तिवारी

धरते हुए कहा–"माँ, मैंने रात को एक सपना देखा है। उसमें बताया गया है कि मैं तुम्हें रोज रुपये दूँ। लो, ये रुपये?"

"ओह! मेरे बेटे! तुम कितने सज्जन हो।" दुर्गाबाई फूली न समाई।

इसे देखने पर सरोजाबाई को लगा कि वह पागल होती जा रही है। उसने इस बारे में गुप्त रूप से अपने पति से पूछा, गणपत ने उसे समझाया–"यह सब नाटक है, स्वांग है। तुम ऐसा अभिनय करो कि इस बाबत तुम कुछ नहीं जानती हो। मैं अपनी माँ को सच्चा सबक़ सिखाना चाहता हूँ।"

इस प्रकार दस-बारह दिन बीत गये। एक दिन सवेरे गणपत ने अपनी माँ के पास जाकर कहा–"माँ, चलो अदालत में! वहीं पर न्याय होगा।"

दुर्गाबाई ने विस्मय में आकर पूछा–"किसलिए बेटे! बात क्या है?"

"मैंने सपना देखा है। तुमने अपनी बहू को मार डाला है। मैंने तुम्हें अदालत में जाकर सिपाहियों के हाथ सौंप दिया है। देरी क्यों? जल्दी चलो!" गणपत ने जल्दी मचाई।

दुर्गाबाई ने रोते-कलपते हुए कहा–"अरे पागल! तुमने सपना देखा है? उसमें मैंने तुम्हारी बहू को मार डाला है? पगले, कहीं सपने की बातें सच होती हैं? तुम सपने पर विश्वास करके मुझे जेल में भिजवा दोगे?"

"माँ, तुम तो आज तक यह कहकर अपनी बहू को सता रही हो न कि उसने तुम्हें सपने में पीटा है? तो क्या ये सारी बातें झूठ हैं? तुम्हारी देखा-देखी मैंने भी सपनों पर विश्वास करना शुरू किया है।" गणपति ने भोलेपन से कहा।

सरोजाबाई ने बीच-बचाव करते कहा–"अजी, माँ के साथ आप यह कैसे मज़ाक कर रहे हैं?"

दुर्गाबाई में ज्ञानोदय हुआ। उसने अपनी बेवकूफ़ी के लिए बहू से क्षमा माँग ली।
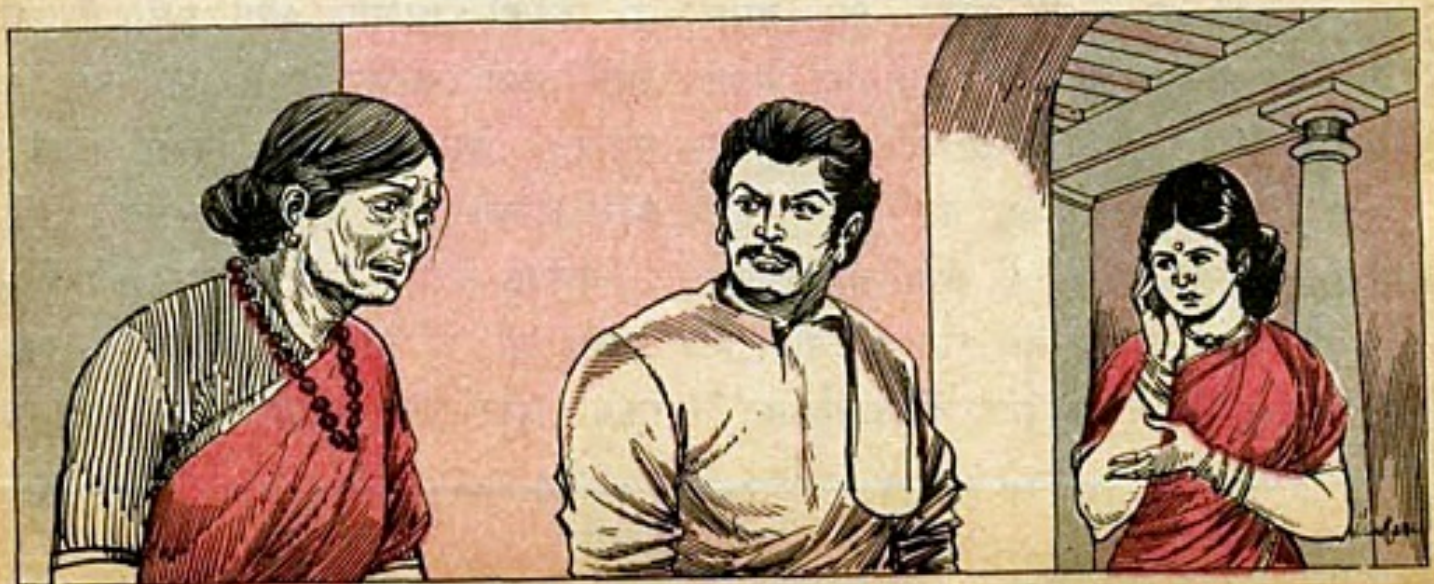
युद्ध में मैरावण की मृत्यु का समाचार चन्द्रसेना ने सुवर्चलादेवी के द्वारा सुना। सुवर्चलादेवी ने चन्द्रसेना को यह भी बताया कि मत्स्य वल्लभ लंका राज्य का राजा बनाया गया है।

चन्द्रसेना यह जानकर अत्यंत प्रसन्न हुई कि उसे मैरावण के बंधनों से मुक्ति मिल गई है, तभी सुवर्चला ने उसे यह शुभ समाचार दिया—"बेटी, तुम भाग्य-शालिनी हो! मैरावण का संहार करके रामचन्द्रजी सीधे तुम्हारे महल में पधार रहे हैं।"

यह शुभ समाचार देकर सुवर्चला देवी चली गई, तब चन्द्रसेना श्रीरामचन्द्रजी के समुचित स्वागत के हेतु तैयारियाँ करने लगी। सर्व प्रथम उसने अपने कक्ष में पुष्पों के तोरण बांध दिये, चन्दन व तांबूल के साथ अभिषेक जल तैयार रखा। शयनागार के सुंदर तल्प पर फूल बिछा दिये।

ये सारी तैयारियाँ करने के बाद चन्द्रसेना एक स्वर्ण थाल में पुष्प तथा गुलाब जल का कलश रखकर द्वार पर खड़े हो श्रीरामचन्द्र की प्रतीक्षा करने लगी। एक-दो मिनटों के बाद आगे आगे हनुमान तथा उसके पीछे श्रीरामचन्द्र के आते दिखाई दिये। रामचन्द्रजी को देखते ही लज्जा के मारे चन्द्रसेना का सिर झुक गया। वह तन्मयत्व में आकर हाथ जोड़कर घुटने टेक बैठ गई।

३३. राम-लक्ष्मण का आगमन

हनुमान ने चन्द्रसेना के कक्ष में प्रवेश कर उससे कहा–"माताजी! मैंने आपको जो वचन दिया था, उसके अनुसार श्रीरामचन्द्र को मैं आप के कक्ष में लिवा लाया हूँ।"

ये शब्द सुनते ही चन्द्रसेना ने अपनी आँखें खोल दीं। सामने उसे श्रीरामचन्द्रजी शांत एवं गंभीर मुद्रा में दिखाई दिये। दूसरे ही क्षण चन्द्रसेना ने रामचन्द्रजी के चरणों को शीतल जल से सोने के थाल में धोये, उस जल को अपने सिर पर छिड़काकर पुष्पों से उनकी पूजा की और कपूर की आरती दी।

अतिशय आनंद के मारे परवशता में आकर चन्द्रसेना कुछ कहने को हुई, पर उसके अधर फड़-फड़ा उठे, वह कुछ बोल न पाई। मौन ही रामचन्द्रजी का स्वागत करते वह उन्हें सुसज्जित तल्प के पास ले गई। शय्या पर स्थित एक पुष्पमाला को उठाकर रामचन्द्र के कंठ में पहनाने को बढ़ी।

इस बीच रामचन्द्रजी हंसतूलिका तल्प के निकट पहुँचे, उस पर बैठने को हुए। तभी वह शय्या बड़ी ध्वनि के साथ मध्य भाग में टूट गई।

चन्द्रसेना समझ न पाई कि क्या हो गया है, वह रामचन्द्रजी के कंठ में पुष्प माला पहनाने को हुई, तब उन्होंने चन्द्रसेना को रोकते हुए कहा–"चन्द्रसेना, शकुन अच्छा प्रतीत नहीं होता। तुम देख रही हो न?" इसके दूसरे ही क्षण चन्द्रसेना के हाथों से फूल माला खिसककर रामचन्द्र के चरणों में गिर पड़ी।

तब तक चन्द्रसेना की तन्मयता जाती रही, वह संभल गई, टूटी शय्या की ओर उसने तीव्र दृष्टि प्रसारित की। शय्या को तोड़नेवाला हनुमान सूक्ष्म रूप में वहीं छिपा हुआ था। हनुमान चन्द्रसेना की तीव्र दृष्टि को सहन न कर पाया। लगा कि उसका शरीर जल रहा है।

हनुमान ने तत्काल अपने सूक्ष्म रूप को त्याग दिया। अपने वास्तविक रूप में

चन्द्रसेना के समक्ष प्रकट हो घुटने टककर कहा–"माताजी, मुझे क्षमा कीजिए! मैंने आवश्यकता के आधार पर जो वचन दिया था, उसके अनुसार मैं श्रीरामचन्द्रजी को आप के पास ले आया. परंतु आप जानती ही होंगी कि श्रीरामचन्द्र एक पत्नीव्रत हैं। याद रखिए, फल की कामना किये बिना उनकी पूजा करना सबसे उत्तम मार्ग है।"

चन्द्रसेना कुछ कहना चाहती थी, मगर उसके कंठ से बोल न फूटे। रामचन्द्रजी ने अपने तेजोमय शांत नयनों से उसकी ओर देखते हुए उसे 'पर तत्व' ज्ञान का प्रबोध किया। उस वक़्त चन्द्रसेना को श्रीरामचन्द्र श्रीमहाविष्णु की भांति प्रतीत हुए। उन्होंने चन्द्रसेना से कहा–"चन्द्रसेना, इस वक़्त मैं रामचन्द्रजी के रूप में एक पत्नीव्रत हूँ। परंतु मैं तुम्हें आश्वासन देता हूँ कि आनेवाले मेरे कृष्णावतार में तुम मेरी अष्ट पत्नियों में सत्यभामा बनकर मेरी अत्यंत प्रियतमा बनोगी।"

उस वक़्त चन्द्रसेना को लगा कि उसके हृदय के भीतर श्रीविष्णु समाविष्ट हुए हैं और वह एक ज्योति के रूप में विष्णु के तेज में विलीन हो रही है। चन्द्रसेना एक ज्योति के रूप में प्रकाशमान होते हुए श्रीरामचन्द्रजी में लुप्त हो रही थी, इसे देख हनुमान विस्मय में आ गया और उसने अपने नयन मूँदकर हाथ जोड़ दिये। थोड़े क्षण बाद उसने नेत्र खोलकर देखा, सामने श्रीरामचन्द्रजी मंदहास करते दिखाई दिये। दूसरे ही क्षण हनुमान उन सारी बातों को भूल गया और रावण के संहार की बात उसके मन में उभर आई।

उसी समय वहाँ पर पाताल लंका का राजा मत्स्य वल्लभ आ पहुँचा। उसने श्रीरामचन्द्रजी तथा हनुमान की फूलों से अर्चना की और उनसे आशीर्वाद प्राप्त किये। इसके उपरांत उसने पाताल लंका के निवासियों के साथ मिलकर उन्हें वहा से विदा किया। हनुमान ने राम और

उनमें से कुछ लोग मद्यपान करते, गीत गाते नाच रहे हैं।

रावण अत्यंत उत्साह में है। वह इस आशा से मैरावण का इंतज़ार कर रहा है कि वह किसी भी क्षण रामचन्द्र और लक्ष्मण की काली माता को बलि देकर उनके सिर लेकर लौट सकता है। इस विचार से रावण राम-लक्ष्मण के सिरों को स्वर्ण थाल में रखकर उसे सीताजी के पास ले जाने के लिए आवश्यक सारी तैयारियाँ भी कर चुका है।

समय बीतता जा रहा था। इसलिए उद्विग्न हो रावण अपने महल से बाहर आया। उसने दुर्ग की दीवार के किनारे खड़े हो दूर पर स्थित वानर सेना को देखा और प्रसन्नतापूर्वक हँस पड़ा। दुख के मारे सर झुकाये खड़े हुए वानरों के समीप में विभीषण भी खड़ा हुआ था। रावण ने उसे पहचान लिया और उच्च स्वर में गर्जन किया–"अरे भाई विभीषण, तुम भी कैसे भोले व्यक्ति हो? तुम अभी तक वहाँ पर इंतज़ार क्यों कर रहे हो? पाताल लंका की काली माता के प्रसाद के रूप में राम-लक्ष्मणों के सिर मेरे पास आनेवाले हैं। तुम तो जानते हो, सिर का माँस अत्यंत रुचिकर होता है। कम से कम उन सिरों के माँस

लक्ष्मण को अपनी सुदृढ़ भुजाओं पर बिठाया, पाताल लंका को पार कर रावण की लंका की ओर आसमान में उड़ चला। मत्स्य वल्लभ ने हाथ हिलाते हुए उसके जयकार किये।

हनुमान लंका नगर के समीप पहुँचने ही जा रहा था, उसने देखा कि वहाँ पर वानर सेना के साथ वानर प्रमुख भी चितामग्न हैं। उनमें से थोड़े लोग जब-तब सिर उठाकर आसमान की ओर देख रहे हैं। अकेले जांबवान मंदहास करते वानरों को हिम्मत बंधा रहा है।

उधर लंका नगर में राक्षस तुरही बजाते मारे खुशी के चिल्ला रहे हैं।

का स्वाद लेने के लिए ही सही, शीघ्र लंका नगर में आ जाओ। तुम्हें डरने की कोई ज़रूरत नहीं। चाहे तुमने जो भी विश्वासघात किया हो, आखिर मेरे भाई हो! मैं तुम्हें अभय प्रदान करता हूँ। आज से ही सही, तुम युवराजा के रूप में मेरे प्रति विश्वास प्रकट करो, तुम तक्षण लंका नगर के लिए रवाना हो जाओ।"

रावण के ये शब्द सुनते ही विभीषण ने अपने कान बंद कर लिये। उसके नेत्र सजल हो उठे। उसका दुख उमड़ पड़ा। विभीषण की दीनता देख सुग्रीव का भी कलेजा कांप उठा। उन दोनों के दुख को देख अन्य वानर भी हाहाकार करते रोने लगे।

वानर सेना की दीन स्थिति को देख रावण एक बार और तृप्तिपूर्वक हँस पड़ा। दुर्ग की दीवार की तरफ़ से गुजरनेवाली राक्षस नारियों को पुकारकर कहा—"तुम लोग तुरंत सीताजी के पास जाकर कह दो कि मैं रामचन्द्रजी के सर के साथ लक्ष्मण का सर भी उपहार के रूप में उनके पास भेजने जा रहा हूँ। अब तक उनके शरीरों को पाताल लंका के राक्षसों ने भोज के रूप में खा लिया होगा। सीताजी को यह समाचार देकर कह दो कि वह राम-लक्ष्मण के सरों को स्वीकार करने के लिए तैयार रहें।"

राक्षस नारियों को लगा कि रावण की इस प्रसन्नता के पीछे थोड़ी बहुत उसकी चित्त-चपलता भी है। सब पल भर के लिए संकोच के मारे खड़ी रहीं, फिर रावण को झुककर प्रणाम करके वहाँ से चली गईं।

इसके बाद रावण दुर्ग की दीवार पर से अपने कक्ष में चला गया। गवाक्ष के निकट बैठकर मैरावण के आगमन का इंतज़ार करने लगा। वह समुद्र पर स्थित आकाश की ओर ताक रहा था। उसी वक्त उसे कोई काली आकृति उड़ते आते हुए दिखाई दी।

जांबवान ने हाथ उठाकर बानरों से कहा–"लो, देखो, हनुमान आ रहा है। अब तुम लोग अपनी चिंता छोड़ दो।"

अंगद उत्साह में भरकर विजयनाद करके चिल्ला उठा–"हमारे हनुमान राम-लक्ष्मणों के साथ लौट रहे हैं। उनका स्वागत करो।"

राम-लक्ष्मण को अपने कंधों पर बिठाये लौटनेवाले हनुमान को देख वानर सेना आनंद के मारे उछल पड़ी। जयकारों से आकाश गूंज उठा। उधर लंका नगर में राक्षसों के आनंदोत्सव अचानक बंद हो गये।

रावण झट से गवाक्ष के सामने उठ खड़ा हुआ। तालियाँ बजाते बोला–"लो, मैरावण काली माता को राम-लक्ष्मण के सिरों की बलि देकर ले आ रहा है। अरे स्वर्ण थाल कहाँ? सिरों को उसमें रखना है। जल्दी थाल लेते आओ।" इसके दूसरे ही क्षण वह हताश हो नीचे लुढ़क पड़ा।

समुद्र पर के आसमान की ओर देखनेवाले जांबवान ने आसमान में किसी काली आकृति को देख उसे पहचान लिया। उसने अपना सर घुमा लिया। बगल में खड़े समुद्र की ओर देखनेवाले अंगद ने जांबवान की ओर विस्मय के साथ देखा।

बानर सेना के उत्साहपूर्ण कोलाहल को सुनकर रावण अपने कक्ष के गवाक्ष के निकट जड़वत खड़ा रह गया। वह यह बात समझ पाया कि राम और लक्ष्मण जीवित हैं, पर मैरावण तथा उसके बड़े भाई का क्या हुआ? हनुमान या राम-लक्ष्मणों ने उनका संहार तो नहीं किया?

रावण यों सोच ही रहा था, तभी एक राक्षस सैनिक ने प्रवेश करके वानर सैनिकों द्वारा सुनी सारी बातें कह सुनाईं। इस प्रकार उसे पाताल लंका का सारा समाचार विदित हुआ। वह भय कंपित हो उठा, और दूसरे ही क्षण वह बेहोश हो गया।
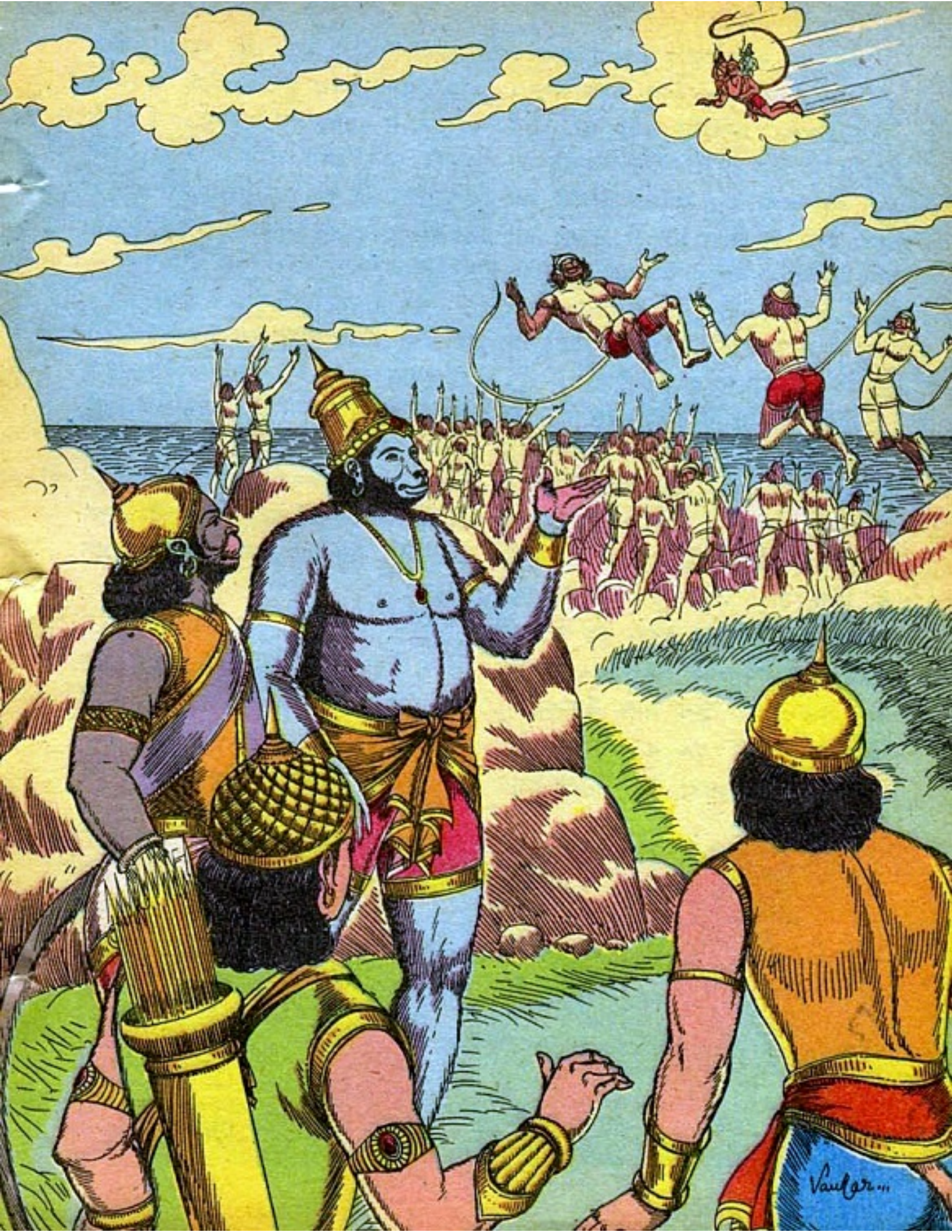
वैशाली नगर का पतन

यह गौतम बुद्ध के जमाने की ऐतिहासिक घटना है। गंगा के तट पर वैशाली राज्य समस्त प्रकार से वैभवपूर्ण था। राज्य का शासन गणतंत्र की पद्धति पर चलता था। सभी वयस्क मिलकर विधान सभा के प्रतिनिधियों को चुना करते थे। वे प्रतिनिधि शासन कार्य सुचारु रूप से चलाने के लिए उनमें से दो योग्य व्यक्तियों को चुनते थे।

गंगा के उस पार स्थित मगध राज्य पर अजातशत्रु नामक राजा शासन करता था। वह अनेक अवसरों पर वैशाली पर अधिकार करने का प्रयत्न करके विफल हो चुका था। वैशाली की जनता सम्मिलित रूप से उसके आक्रमणों का सामना करके विजय प्राप्त करती थी।

अजातशत्रु का मंत्री वश्यकर अत्यंत कुटिल और राज-तंत्र में कुशल था। उसने अपने राजा को एक योजना बताई। इस पर राजा ने प्रकट रूप में वश्यकर का अपमान करके उसे मगध राज्य से निकाल दिया।

वश्यकर ने अपमान के भार से दुखी होने का अभिनय किया और गंगा में नाव पर सवार हो वैशाली की ओर चल पड़ा। वैशाली की जनता ने सोचा कि वश्यकर ने अजातशत्रु के वैशाली पर आक्रमण करने से आपत्ति उठाई। इस कारण अजातशत्रु ने उसे अपने देश से बहिष्कार किया।

वैशाली की प्रजा वश्यकर के कुटिल तंत्र से अपरिचित थी, इसलिए जब वश्यकर वैशाली के घाट पर उतरा तब उसका सम्मान किया और हाथी के हौदे पर बिठाकर प्रजा-सभा में ले गई।
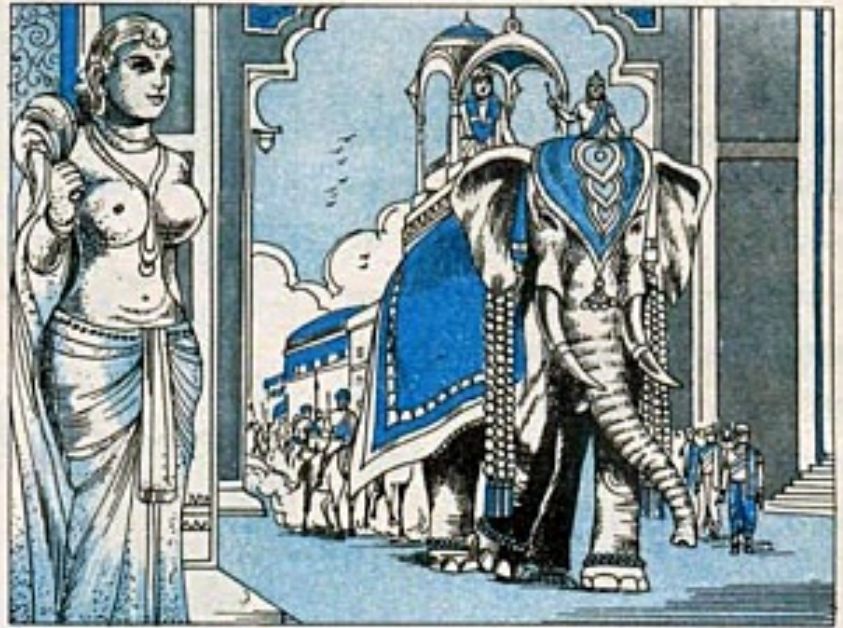
वश्यकर ने अपने देश की सुरक्षा तथा जनता की स्वतंत्रता के हेतु जो त्याग किया था, उसके प्रति कृतज्ञता स्वरूप वैशाली के प्रजा-प्रतिनिधियों ने एक मत से उसे शासन के सलाहकार के रूप में चुना। इस प्रकार वश्यकर को वैशाली राज्य के शासन-कार्यों में प्रमुख स्थान पाने का मौक़ा मिला।

वश्यकर अपने साथ मगध से बहुत सारा धन लाया था। उस धन से वैशाली नगर के पमुख व्यक्तियों को अकसर दावतें देता .था मनोरंजन के कार्यक्रम भी संपन्न करने लगा। इस प्रकार उस ग. .तंत्र शासन में वश्यकर ने अनतिकाल में ही यश एवं प्रतिष्ठा प्राप्त की।

वश्यकर ने जान लिया कि वैशाली का शासन-कार्य संभालनेवाले दो प्रमुख व्यक्तियों में एक का सेना विभाग पर और दूसरे का जनता पर असाधारण प्रभाव है। अपनी पूर्व योजना के अनुसार वश्यकर ने उन दोनों के बीच शत्रुता और विद्वेष पैदा करना प्रारंभ किया।

दोनों व्यक्तियों के मन में यह गलत फ़हमी थी कि वश्यकर उनके अभिन्न मित्र हैं। इस कारण वश्यकर की कुटिल नीति उन पर अपना असर डालने लगी और शीघ्र ही सेना तथा जनता के बीच अनैक्यता का कारण बनी।

इसे आधार बनाकर वश्यकर ने सेना के बीच कलह पैदा किया। सेना दो भागों में विभक्त हुई। जनता में भी दो दल बन गये। उनके आपसी कलह के कारण वैशाली नगर में अराजकता फैल गई।

वश्यकर ने भांप लिया कि मगध का राजा अजातशत्रु के लिए वैशाली पर अधिकार करने का यही अच्छा मौक़ा है और उसने राजा के पास ख़बर भेजी। मगध की सेना ने अचानक वैशाली पर हमला किया।

दुर्ग के बुर्जों पर स्थित सैनिकों ने शत्रु के हमले की सूचना देते हुए तुरही और घंटियां भी बजाईं। मगर आपसी कलह में निमग्न सेना या जनता ने भी शत्रु का सामना नहीं किया। इस कारण अजातशत्रु ने अनायास ही वैशाली नगर पर अधिकार कर लिया और नगर की जनता को अपने दास बनाकर मगध ले गया। इस प्रकार प्राचीन भारत के एक गणतंत्र राज्य का पतन हो गया।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए !

?

एक जमीन्दार के यहाँ मवेशी चरानेवाला एक लड़का था। एक दिन एक गंधर्व ने किसी काम में उस लड़के की मदद पाई और बदले में उसने उसे चुटकी बजाने पर सोने की कनी पाने की शक्ति तथा सर पर रखने से अदृश्य होनेवाली टोपी दी।

मवेशी चरानेवाले लड़के ने एक दिन रात को बैठकर थैली भर सोना तैयार किया। उसने सोचा कि उसे किसे दिया जाय, तब उसे जमीन्दार की पुत्री याद आई। वह कई दिनों से मन ही मन उसके साथ प्यार करता था।

दूसरे दिन की रात को वह अदृश्य रूप में जमीन्दार की पुत्री के कमरे में गया और सोने से भरा थैला उसके खाट के पास छोड़ आया। इस प्रकार एक सप्ताह बीत गया। जमीन्दार का परिवार यह समझ न पाया कि कौन यह सोना देता है। धन के अभाव में यातनाएँ झेलनेवाले जमीन्दार ने सोचा कि सोना देनेवाला व्यक्ति दिखाई दे तो उसके साथ अपनी पुत्री का विवाह करे; मगर उसका पता न लगने पर जमीन्दार ने सोचा कि सोना देनेवाला व्यक्ति कोई देवता होगा।

एक दिन मवेशी चरानेवाला लड़का सोने का थैला ले सिर पर टोपी रखना भूलकर जमीन्दार की बेटी के कमरे में पहुँचा और उसकी चारपाई के निकट खड़ा हो गया। उस वक्त नौकरों ने उसे पकड़कर जमीन्दार के हाथ सौंप दिया।

जमीन्दार ने डांटकर कहा—"अरे दुष्ट, किसी देवता से मिलनेवाला सोना तुम हड़पना चाहते हो?" इन शब्दों के साथ उसके दोनों हाथ कटवा दिये।

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें—"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा २ & ३, आर्काट रोड़, मद्रास - ६०००२६

कार्ड हमें जुलाई १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के सितम्बर '७७ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

मई मास की प्रतियोगिता का परिणाम: "जान बची, लाखों पाये!"

पुरस्कृत व्यक्ति: श्री अशोक कुमार, सत्ती बाजार, ११/५४ (५) नत्थानी बाड़ा, रायपुर

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ सितम्बर १९७७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

★

K. P. A. Swamy

P. G. Viswanathan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जुलाई १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मई के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो: **पानी से कैसा डर ?**

द्वितीय फोटो: **यह तो रोज़ का चक्कर !**

प्रेषक: **श्री ए. चटर्जी.** २१७९/३ रंजित नगर, वेस्ट पटेल नगर, नई दिल्ली

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

लोटपोट पढ़िये

और
हंसते हंसते
लोटपोट
हो जाइये

लोटपोट साप्ताहिक

मॉं के प्यार के बाद!

हमदर्द ग्राइप वाटर। आप के प्यार
की तरह कुदरती। इसमें पांच प्राकृतिक
द्रव्य सम्मिलित हैं जो आपके बच्चे की कोमल पाचन
क्रिया को ठीक करते हैं और पेट की खराबी,
दर्द, अफ़ारा और दस्तों में आराम देते हैं।

हमदर्द
ग्राइप
वॉटर

HT-HGW-3707 A.H

कौन है वह? सचमुच कृष्ण ही है?
...या फिर कोई बहुरुपिया?
वह तुम्हारे पास क्यों आया है, आनन्द?
मुमकिन है कि यह सिर्फ़ तुम्हारा ख़याल ही हो...
कोई सपना है या खुद तुम ही हो?
दरअसल वह तुमसे क्या चाहता है, आनन्द?
इन्सान के दिल में उठनेवाले विचारों के चढ़ाव-उतार का चित्रण यानी
बी. नागी रेड्डी की फ़िल्म
यही है ज़िंदगी
इस्टमनकलर, फ़िल्मसेन्टर द्वारा
मनुष्य के आंतरिक भावों का सुस्पष्ट निरूपण—
अहम् और परितोष के बीच संघर्ष की कहानी।
दिग्दर्शक: के. एस. सेथूमाधवन संवाद: इन्द्र राज आनन्द
गीत: आनन्द बक्षी संगीत: राजेश रोशन
विजया प्रॉडक्शन्स की अनूठी फ़िल्म

चुन्नु का ड्राईंग में प्रथम आने का रहस्य ?

कॉलिंक

के रंग

आप भी कॉलिंक के रंग इस्तेमाल करें
और चुन्नु की तरह प्रथम आयें।

पोस्टर
व वाटर कलर

आर्टमास्टर
व चित्रकार कलरबाक्स

कॉलिंक इन्डस्ट्रीज नजफ़गढ़ रोड, नई दिल्ली-110015

CHANDAMAMA (Hindi) JULY 1977 Regd. No. M. 5452